उपन्यास

Rekha ९२ (1957)

R e k h a

Hindi Translation

of Novel Kirandar Devaroon

of Smt. Sundri Uttamchandani

Translation from Sindhi To Hindi by

Harish Vaswani

Scanned by Asha Chand

Daughter of

Sundri Uttamchandani

Visit www.SundriUttam.com

Read books and listen to Audio Stories

For any information about Sundri

contact: Asha Chand 9821473200

SindhiSangat@gmail.com

उपन्यास

सम्पादक

श्रीपतराय

भैरवप्रसाद गुप्त

१२

सरस्वती प्रेस इलाहाबाद

कापीराइट
सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद
१९५७

*
वार्षिक मूल्य ६)
एक प्रति का मूल्य ।।।) या ७५ नये पैसे
*

मुद्रक : भार्गव प्रेस, इलाहाबाद

सम्पादकीय

इस अंक में दो लघु-उपन्यास प्रकाशित हो रहे हैं, एक विश्वविख्यात कथाकार ख़लील जिब्रान का 'नास्तिक' और दूसरा सिन्धी की सुप्रसिद्ध लेखिका सुन्दरी उत्तम चन्दानी का 'रेखा'।

ख़लील जिब्रान का कौल था :

मेरा कोई शत्रु नहीं है। पर, भगवान, यदि कोई हो, तो उसकी शक्ति मेरे बराबर हो और केवल सत्य की विजय हो!

सत्य के इस पुजारी ख़लील जिब्रान का जन्म १८८३ ई० में लेबनान के बशरा नामक नगर में एक सम्पन्न ईसाई परिवार में हुआ था। इनकी शिक्षा-दीक्षा बेरूत के अपने समय के सुप्रसिद्ध विद्यालय मदरसात-अल-हिकमत में हुई। सन् १९१२ में जब यह अपने विद्रोही विचारों के कारण देश-निष्कासित कर दिये गये, तो यह न्यूयार्क चले गये और स्थायी रूप से वहीं रहने लगे। १९३१ में १० अप्रैल को इस महान साहित्यकार का एक मोटर दुर्घटना में देहान्त हो गया। उस समय इनकी आयु केवल ४८ वर्ष की थी। पर इस छोटी आयु में ही इन्होंने जो कीर्ति अर्जित की, वह असाधारण है।

ख़लील जिब्रान एक महान् चिन्तक, कवि, कथाकार, गद्यकार और चित्रकार थे। साहित्य के प्रत्येक रूप पर इनकी लौह-लेखनी समान गति से चली और उसे सम्पन्न किया। इनकी शैली बड़ी ही ओजपूर्ण, प्रवहमान और हृदयग्राही है। वह अन्तर को भिगोती चलती है। जितनी वह सरल है, उतनी ही तीक्ष्ण। इतने उच्च विचारों को इतनी सरल भाषा और इतने सीधे ढंग से शायद ही कोई कह सका हो। इनकी सारी रचनाएँ सुभाषितों से भरी हैं और इनके गद्य में कविता की सुकुमारता और संगीत का माधुर्य है।

ख़लील जिब्रान अन्धविश्वास और धर्मान्धता के घोर विरोधी थे। वह धर्म का पालन श्रद्धा से नहीं, वरन विवेक से करने के हिमायती थे। इन्होंने अपनी रचनाओं-द्वारा अज्ञान, रूढ़िवाद एवं धर्म और समाज के ठेकेदारों के काले कारनामों का अति निर्ममता से पर्दा फ़ाश किया। सामन्तवाद के अत्याचारों एवं पादरियों और -नानों के दमन-चक्र से कराहती-सिसकती जनता और उनके विद्रोह का इन्होंने -र्भीक और सजीव चित्रण किया है, वह देखने की ही चीज़ है। इनके वर्णित -ही तीव्रता और दर्द है, जो हमें सूफ़ी साहित्य में मिलता है।

-ोल जिब्रान ने बहुत लिखा है। अरबी और अंग्रेजी भाषा पर इन-
-धिकार था। इनकी रचनाओं की संख्या अभी निश्चित नहीं स-

क्योंकि अब भी इनका बहुत-सा साहित्य तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में बिखरा पड़ा है। 'प्राफेट' इनकी सर्वोत्कृष्ट कृति मानी जाती है। इसमें जीवन की जो सरस व्याख्या है, वह अप्रतिम है। इसका अनुवाद विश्व की प्रत्येक जीवित भाषा में हो चुका है। इनकी अन्य रचनाएँ भी बहुत तेज़ी से विभिन्न भाषाओं में अनूदित होकर पाठकों का कंठहार बन रही हैं। इनके चित्रों की प्रदर्शनी भी विश्व की बड़ी-बड़ी राजधानियों में हो चुकी है।

'नास्तिक' जिब्रान की उस समय की रचना है, जब उनकी अवस्था केवल २४-२५ वर्ष की थी। पर इसमें विचारों की जो परिपक्वता और कला की जो प्रौढ़ता है, वह किसी तपे हुए मनीषी की ही लगती है। यह कृति उन्हीं कृतियों में से एक है, जिनके कारण उन्हें जातिच्युत कर देश-निष्कासन दिया गया था। इसमें सामन्तवाद और उसके अत्याचारों और उसके प्रति ख़लील के विद्रोह का वर्णन निर्भीक वाणी और व्यंजना की शैली में किया गया है। उसका पुरस्कार यदि मदांध शासकों-द्वारा उन्हें यह मिला, तो कोई आश्चर्य नहीं। ख़लील का विद्रोह कराहती-सिकती हुई जनता का विद्रोह है। उसके उद्गार ईशू के उद्गारों की ही भाँति पवित्र हैं। 'स्वतंत्रता' को सम्बोधित कर पश्चिमी देशों के बारे में उसने जो कुछ कहा है, वह आज अरब जगत में साम्राज्यवाद के चलते कुचक्र को देखते हुए बहुत सामयिक लगता है। सत्य के विजय की यह कहानी, आशा है, आपको भी बहुत शक्ति देगी।

*

'रेखा' टूटते हुए मध्यम वर्ग की एक नारी की कहानी है। सुख-वैभव के सपने सँजोये जीवन में प्रवेश करनेवाली रेखा को लेखिका ने जिस सहानुभूति, स्नेह और कोमलता के साथ जीवन की कटुताओं, अभावों, दुखों और संघर्षों से परिचित कराया है, प्रशंसनीय है। रेखा जीवन के इन तत्वों से परिचित होकर, उनमें तपकर ही जैसे खरा सोना बन जाती है। अब उसे किसी आँच का भय नहीं।

विशेषांक

'उपन्यास' का अगला अंक विशेषांक होगा। उसमें विश्वविख्यात उपन्यास 'क्राय, द बिलवेड कन्ट्री' का अनुवाद 'धरती के आँसू' पूरा-का-पूरा एक साथ ही प्रकाशित होगा। पृष्ठ-संख्या २५० से ऊपर। एक प्रति का मूल्य डेढ़ रुपया। लेकिन ग्राहकों को यह विशेषांक वार्षिक शुल्क में ही प्राप्त होगा। जिन ग्राहकों का वार्षिक शुल्क समाप्त हो रहा है, उनसे निवेदन है कि तुरन्त शुल्क मनिआर्डर से भे[ज] अगले वर्ष के ग्राहक बन जायँ और विशेषांक की अपनी प्रति सुरक्षित करा लें

ल
कथन पर
टपांत कर,
में अब

रेखा

सुन्दरी उत्तम चन्दानी

(१)

दीपक का अंतिम पत्र था:

पिताजी, दुकान का सारा सामान जाता रहा और बाज़ार का इतना ऋण है कि व्यापार से संन्यास लेने के सिवाय और कोई राह नहीं सूझती।

गोपालदास ने अपनी सारी ज़िंदगी जावा में दुकान जमाने में बितायी थी, इस लिए कि जब दीपक योग्य होगा, तो दुकान उसके हाथों में सौंप, स्वयं देश में रह-कर, अपने शेष दिन सुख-शांति से बितायँगे। पर दीपक ने पाँच साल में ही दुकान चौपट कर दी। दीपक के भाग जाने का समाचार हैदराबाद (सिंध) पहुँचा, तब इस घर का सौभाग्य-सूर्य अस्ताचल की ओर लुढ़क रहा था।

वैसे गोपालदास की उम्र बहुत अधिक न थी। पर इस घटना के बाद वह इतने अशक्त हो गये कि उठने के लिए कमर पर हाथ रखने की आवश्यकता पड़ने लगी, ज्यादा बातें करते, तो खाँसी का दौरा पड़ जाता। यह चोट कोई साधारण न थी। उनकी सारी जायदाद बिक गयी। इस जायदाद के बल-बूते पर ही उन्होंने रेखा का बीस वर्ष तक लाड़-प्यार से पालन-पोषण किया था और पन्द्रह हज़ार रुपये अपनी बड़ी लड़की शील को ब्याहने में खर्च कर, उसे चार सौ रुपये मासिक आय-वाले, सुयोग्य वर के हाथ सौंपा था।

गोपालदास अब किराये के मकान में रहने लगे थे। जो रिश्तेदार उनके घर में डेरा डाले पड़े रहते थे, अब विशेष उत्सवों पर भी कठिनता से बुलाये जाते। मित्रों का घर पर आना-जाना बन्द-सा हो गया। जब वह अकेले होते, तो अपने छोटे-से पोते को गोद में लेकर कहते—बेटे, जब अन्न ही समाप्त हो गया, तो पंछी क्यों आयँगे? चलो, हम दोनों 'लूडिया' खेलकर मन बहलायें।

बालक पूछ बैठता—दादा, मेरे साथ खेलने के लिए मेरे पिताजी कब आयँगे?

उस जिज्ञासु बालक का यह प्रश्न सुनकर, उनका आनन-आकाश दुःख की घटाओं से आच्छादित हो जाता, गीली आँखें पोंछते हुए, वह कहते—जब उसकी मेम मर जायगी, तभी वह आयगा!

उनका हृदय तड़प उठता। आखिर इस बालक ने क्या अपराध किया है? माँ के लाड़-प्यार से शैशवावस्था में ही वंचित हो गया, और निर्मोही पिता पराये जाल में फँसा पड़ा है।

रेखा की माँ जब-कभी दीपक का चित्र देखती, उसे लगता कि उसके नेत्रों की ज्योति बुझती जा रही है। रेखा जब अपने कमरे में बैठी, वीणा के तारों को छेड़ते हुए, करुण-स्वर में कोई गीत गाती, तो गोपालदास के मुँह से आह निकल

जाती, रेखा की माँ आँसू बहाने लगती। गोपालदास कहते, रेखा के भाग्य में ही सुख होता, तो यह-सब क्यों होता। तब तो ऐसे सुपात्र से उसका ब्याह करता कि औरों को इसके सुख से ईर्ष्या होती।

और तभी अचानक एक आँधी आयी, देश के बँटवारे की भयंकर आँधी! पहले तो लोग सहम-से गये, फिर भाग खड़े हुए। हैदराबाद की गलियाँ सूनी होने लगीं। रेखा की माँ कहने लगी—पहले जब महामारी का प्रकोप होता था, तब भी लोग ऐसे नहीं भागते थे। अब ऐसा क्या हो गया कि लोग अपनी जायदाद मिट्टी के मोल बेचकर भाग रहे हैं?

गोपालदास उसे अखबार पढ़कर सुनाते कि किस तरह लाहौर में धन-जन की, युवतियों की लूट मची है। फिर दम्पत्ति की आँखें रेखा के तरुण, सुन्दर शरीर पर जा टिकतीं। तब माँ का हृदय कल्पित अनिष्ट के विचार-मात्र से काँप उठता। जब रेखा अबोध बालिका थी, तब भी उसे साथ लेकर जब रुक्मिणी बाहर निकलती, तो लोग कहते—यह लड़की तो तुमने दूध-घी में पलकर पैदा की है!

उस समय उसके हृदय में पुत्री के प्रति स्नेह और भी बढ़ जाता था। रेखा के सौन्दर्य की सराहना सुनकर रुक्मिणी आनन्द और गर्व का अनुभव करती थी और मन-ही-मन कहती कि इस कोमल कलिका को कभी गरम हवा न लगे!

एक दिन गोपालदास की बहन ने आकर कहा—भैया, व्यापार में बहुत अधिक हानि होने पर भी, आपके पास अभी इतनी संपत्ति शेष है कि कठिन समय आने पर सुगमता से पाकिस्तान छोड़ सकते हैं। ऋण-रोग से भी आप मुक्त हैं। पर मेरे पास तो सौ-दो सौ रुपये भी नहीं कि लड़कियों को लेकर कहीं जा सकूँ।

गोपालदास बोले—दीदी, ऐसा न कहो। तुम्हारी लड़कियाँ अभी बच्ची हैं। जिसके घर सयानी कन्या है, वही सबसे बड़ा ऋणी है। अगर रेखा के लिए दस हजार भी बचे होते, तो इस भागमभाग में भी इस बोझ को सर पर न लादे रहता। फिर भी हृदय से कृपण नहीं हूँ, समय आने पर तुम्हें सौ-दो सौ देने में हिचकूँगा नहीं।

बहन ने कृतज्ञता से सर झुका लिया। बोली—भैया, बुरा न मानो, तो एक बात कहूँ?

—कैसी बातें करती हो, दीदी! तुम मेरे लिए रेखा-सी ही प्रिय हो।

—तो, फिर रेखा की सगाई मेरी देवरानी के भतीजे के साथ कर दो। लड़का तीन-तीन कालेज पढ़ा है और कमाऊ भी है। लेन-देन की खींचतान भी न होगी। बड़ी बहू मायके चली गयी है, काम-काज में हाथ बँटानेवाली कोई नहीं है।

बहन चली गयी, तो रेखा की माँ ने गला फाड़कर अपना फैसला सुना दिया कि वह ऐसे कंगाल घर में अपनी लड़की कभी नहीं ब्याहेगी।

शहर खाली होता रहा ।

गोपालदास अखबार पढ़-पढ़कर रेखा की माँ को समझाते रहे कि किस तरह अंग्रेज, एक हठीले बालक की तरह, जो खिलौने को अपने पास न रख पाने की स्थिति में तोड़ कर नष्ट कर देता है, इस देश का अंग-भंग कर विनाश की आग भड़का रहे हैं....

देश-भर में सनसनी फैल गयी थी। सिन्ध के गाँवों में हर रात सैकड़ों विवाह होने लगे थे। लोग लड़कियों को भार समझकर उन्हें दूसरों के कन्धों पर डालने लगे थे।

एक दिन पड़ोस से लौटकर आने पर, रुक्मिणी सीधे पति के कमरे में जाकर, बोली—अब तो मेरा मन बैठ-सा गया है। सभी यहाँ से भागने की तैयारी कर रहे हैं। हम जवान, कुँवारी लड़की लेकर, कहाँ-कहाँ भटकेंगे !

गोपालदास ने कहा—पगली कहीं की, यों रोने-सिसकने से थोड़े समस्या हल होगी ! यह तो होता नहीं कि कहीं उसके लिए घर-वर ठीक करो। दीदीवाली बात भी तू नहीं मानती।

—आपका तो स्वभाव ही विचित्र है !....और भी तो कई घर हैं। उनकी कोई पूछताँछ नहीं, बस, इसी की रट लगी है !....हर समय यह दीदीवाली सगाई !....मैं कहती हूँ, आपको सीतलदास के घर का ध्यान क्यों नहीं आता ?

—लेकिन,—चारपाई पर बैठते हुए, गोपालदास ने कहा—सीतलदास को चाहिए बीस हजार रुपये !....यहाँ गाँठ में बीस सौ रुपये भी नहीं हैं और चली हो हाथियों के साथ गन्ना खाने !

—रुपये थे तो बहुत, पर उन्हें ख़तम होते देर न लगी ! इसी लिए तो आज कन्या का भार उतारने में असमर्थ हैं।

रुक्मिणी दिन-भर नेत्रों से नीर बहाती रही। रात को वह हृदय में चुभ रहे शूल को सहन न कर पाने के कारण, पति से बोली—अगर दीदी की बात मान लें, तो रेखा बुरा तो नहीं मानेगी ?

गोपालदास ने सहज भाव से कहा—जाकर रेखा से ही पूछ लो न।

गोपालदास के हाथों पर गरम-गरम आँसुओं की बूँदें आ टपकीं। चौंककर, बोले—अरे, पगली, रोती है ? अगर रेखा का भाग्य अच्छा होगा, तो उसका सौभाग्य अवश्य चमकेगा !

—पर, रेखा क्या कहेगी ?—भारी स्वर में रेखा की माँ बोली—फूलों में पालकर काँटों पर कैसे फेंक दें ?

—माँ, मैं कुछ न कहूँगी !

दोनों विस्मयान्वित हो गये। आवाज़ रेखा की ही थी। गोपालदास ने कहा—रेखा बिटिया, अन्दर चली आओ।

रेखा ने साहस बटोरकर उत्तर तो दे दिया था, पर अब वह अपनी व्यथा न झेल सकी और कमरे में जाकर, फूट-फूटकर रोने लगी।

एक सप्ताह बीत गया। विवाह की सारी तैयारी शीघ्रता से हो गयी। उस दिन जैसे ही रेखा की आँख खुली, उसे लगा, मानो सारा आकाश जगमगा रहा हो। जो-कुछ वह रात-भर सोचती रही थी, उसे याद करने की कोशिश करने लगी, तो, जल पर तैरते हुए फूलों की तरह, उसके हृदय-सरोवर में एक ही बात तैर आयी, आज मेरा विवाह है !........

उसने सोचा, आज तक उसकी जीवन-नैया भटकती रही, अब किनारा सामने है।

इतने में इन्दिरा, शील और गोपी, रेखा की तीनों मौसेरी बहनें आकर उसके सिरहाने खड़ी हो गयीं। उनके हँसी-मज़ाक से सारा कमरा गूँज उठा। एक-दूसरे को चुटकी काटते हुए वे रेखा से मज़ाक करने लगीं।

एक ने कहा—लल्ली ने आज रात बड़ा मधुर-मादक सपना देखा होगा !

दूसरी बोली—ज़रा देर से उठती, आज तो सारी रात जागना पड़ेगा !

तीसरी भी, लहसुन-प्याज में हींग-सी, बोली—अजी, एक आज की ही रात क्या,....अब तो न जाने कितनी रातें जागकर बितानी पड़ेंगी ! उन सारी रातों के लिए, आज ही नींद पूरी कर लेती क्या ?

रेखा सुमन-सी हँसती-महकती बहनों की चुटकियों से किलकती, चौके तक जा पहुँची। चेहरे से लज्जा और पुलक की लाली धोने के लिए गिलास में पानी ले मुँह धोने लगी। हाथ-मुँह धोकर, रेखा ने अंदर झाँका, तो उसकी चाची, ममेरी बहन और शीलवन्ती आपस में बातचीत कर रही थीं।

रेखा को देखते ही सब चुप हो गयीं। यह देखकर रेखा को शंका-सी हुई। उनकी करुण दृष्टि उसके हृदय में चुभने लगी। वह पिता के कमरे के पार्श्व से गुज़री, तो देखा, उसकी माँ, कुर्सी पर बैठी, पति से कुछ बातें कर रही थी। रेखा को देखते ही दोनों चुप हो गये। रेखा ने भीतर जाकर देखा, दोनों के मुँह पर चिंता-राहु की छाया पड़ी हुई थी। वह और भी शंकित हुई, अवश्य कोई बुरी घटना घटी है !

पर, ऐसा भी क्या रहस्य है, जो उससे छुपा रहे हैं ?

दूसरा कमरा भी, जो अब तक हँसी-मज़ाक से गूँज रहा था, एकाएक नीरव हो गया। रेखा तेज़ी से वहाँ गयी। सभी कान देकर, चाची की बातें सुनने में मगन थीं। रेखा चिक उठाकर, अंदर जाना ही चाहती थी कि चारों ओर सन्नटा-सा छा

गया। कमरे में इतनी स्त्रियाँ थीं, तो भी रेखा को एक भयावह सन्नाटे का आभास मिला। वह सोचने लगी, कहाँ जाऊँ? क्या करूँ? ये-सब मेरी ओर यों करुण दृष्टि से क्यों देख रहीं हैं? और देखकर, यों मुँह क्यों मोड़ लेती हैं?

उसका मन हुआ, उन-सब का पल्ला खींच-खींचकर, पूछे कि ऐसा कौन-सा अपराध मैंने किया है, जो तुम सभी यों मेरी ओर रहस्यात्मक दृष्टि से देख रही हो?...वह भागती हुई माँ के कमरे में गयी। रुक्मिणी व्यथितमना किसी गहन विचार में डूबी थी। यह देखकर रेखा के हृदय की गति रुक-सी गयी। जब माँ को सारे घर में घूम-घूमकर सबके खाने-पीने की व्यवस्था करनी चाहिए, उस समय वह ऐसी उदासीन स्थिति में क्यों?....रह-रहकर हवा में एक ही प्रश्न गूँज रहा था, क्यों?....क्यों?....क्यों?

एक अप्रत्याशित भय की कल्पना कर, वह चीख-सी उठी और दौड़कर माँ की गोद में जा गिरी। सिसकते हुए उसने पूछा—माँ, आप-सब यों चुप क्यों हैं?

रुक्मिणी रेखा के सर पर स्नेहपूर्वक हाथ फेरती हुई बोली—योंही, बेटी, कोई खास बात नहीं है।

—मेरी सौंगध!—अपनी छलकती आँखें ऊपर उठाते हुए रेखा बोली।

रुक्मिणी का हृदय पिघल गया। बोली—रात को एक बुरी खबर सुनी है।

—क्या सुना है? ऐसी कौन-सी बुरी खबर सुनी है, माँ?—रेखा अधीर होकर बोली। उसने माँ के गले में अपनी बाहें डाल दीं।

माँ ने आँचल से आँसू पोंछते हुए कहा—रात को तुम्हारे पिताजी के पास जो हरिराम बैठा था, वह तुम्हारी जेठानी का रिश्तेदार है। वह कहता था, चंदन मुश्किल से अस्सी रुपये महीने कमाता है। घर में इतनी गरीबी है कि बड़ी बहू खाने-पीने की तंगी के कारण मायके चली गयी है।

रेखा कुछ क्षण मौन रही। फिर चंचल बालक की तरह सर उठाकर बोली—भला, इसमें ऐसी क्या बुरी बात है, जो सारे घर में उदासी छा गयी है!

पुत्री की अबोध आँखों में झाँकते हुए रुक्मिणी बोली—मैंने तुम्हें फूलों की तरह पाला-पोसा, अब ऐसे कंगाल घर में कैसे जाने दूँ! मैं तो पहले ही इन्कार कर रही थी।

रेखा चौंक उठी। गोपालदास ने कमरे में प्रविष्ट होते हुए पत्नी के अन्तिम शब्द सुन लिये थे। बोले—पगली, तो क्या विवाह के दिन सगाई तोड़नी है? अब तो वचन दे दिया, सो दे दिया। पुत्रवती माँ के घर लड़की जा रही है, भूखों नहीं मरेगी! जो-कुछ भाग्य में लिखा है, वह तो होगा ही। हम भी तो विवश हैं.... कुलीन, संपन्न घर का वर बिना दहेज के कहाँ मिलता है?

रुक्मिणी ने कुछ न कहा। मन-ही-मन बोली, असमर्थता ही तो सबसे बड़ा दुख है!

रेखा चुपचाप बाहर चली गयी थी। मन में कहने लगी, माता-पिता ने अब तक मुझे लाड़-प्यार से पाला-पोसा है, अब मेरा यह कर्त्तव्य है कि उनका दुःख कम करूँ।

दोपहर के भोजन तक हरिराम की बात सभी भूल-से गये। केवल रुक्मिणी पर ही चिन्ता का भूत सवार रहा। बार-बार उसे चक्कर आ जाता था। रेखा के स्वभाव को वह अच्छी तरह जानती थी। जो ऊँचे स्तर के रहन-सहन में भी जरा-सा अभाव भी सहन न कर सकती थी, वह ऐसी ग़रीबी में कैसे दिन बिता सकेगी!.... इस कल्पना से वह रह-रहकर चिंतित हो उठती। जब-कभी रेखा माँ की करुण और ममता-भरी दृष्टि देख लेती, उसकी हृदय-वीणा पर बजते हुए शुभ लग्न के मंगल-गीत मौन हो जाते थे। परन्तु फिर घर के शोरगुल, सखियों के हँसी-मज़ाक और खिलखिलाहट के बीच वह सब-कुछ भूल जाती।

घर के रीति-रिवाज के विपरीत काम करना रुक्मिणी के बस की बात न थी। गाँठ खाली होते हुए भी, उसने रिश्तेदारों को बुलाकर घर भर लिया था। दिन-भर नवेली युवतियाँ रेखा को चारों से घेरे बैठी रहतीं और अपने-अपने मधुर अनुभव बताकर, उसकी प्रणय-भावनाओं को उकसाती रहतीं।

(२)

सुहाग रात को रेखा ने जो-कुछ अनुभव किया, उसे शब्दों का रूप देकर, हृदय के एक कोने में अंकित कर लिया, चन्दन के पास मेरी भावनाओं को समझने-वाला हृदय नहीं है।

बात साधारण थी। चन्दन ने उसका हाथ पकड़कर कहा—आओ, चारपाई पर आकर सोओ।

रेखा ने मना किया—मैं अलग चारपाई पर सोऊँगी,—और अपना हाथ छुड़ा लिया।

चन्दन उदास होकर बोला—भाग्यहीने, इस कमरे में दूसरी चारपाई रखने की जगह ही नहीं है!

रेखा पति की यथार्थवादिता पर चकित रह गयी। उसने सोचा था कि वर राजा उसकी बल खाती कमर में हाथ डालकर, उसे अपनी चारपाई पर लिटायगा, फिर हँस-हँसकर कहेगा, रानी, कहीं वर-वधू अलग-अलग सोते हैं! और मधुर चुंबनों से

उसका मुख पुलकित कर देगा। पर रेखा की कल्पना केवल कल्पना ही रह गयी। वह शान्ति से कुर्सी पर से उठकर बिस्तर पर जा लेटी।

उस रात पति-पत्नी में कई बातें हुईं। बातों-ही बातों में, जीवन के उद्देश्य पर विचारों का आदान-प्रदान होने लगा। रेखा ने कहा—मेरे लिए, मेरी दृष्टि में, तो वर-वधू का परस्पर प्रगाढ़ प्रेम करना ही जीवन का उद्देश्य है।

चन्दन बोला—मेरे विचार से, देशवासियों की सेवा करना ही जीवन का उद्देश्य होना चाहिए।

यह बात रेखा के गले न उतरी। बोली—दूसरों की उलझनों से हमें क्या लेना! दूसरों के जीवन से हमें क्या ताल्लुक? ये बड़ी-बड़ी, आदर्श की बातें मुझे नहीं भातीं।—और अचानक रेखा को अपने चारों ओर बाहों का बंधन ढीला होता हुआ जान पड़ा। उसके हृदय पर आघात सा हुआ। कुछ देर तक दोनों में कोई बात-चीत नहीं हुई, न फिर बाहों का बंधन ही कसा। धीरे धीरे, पति की बाहों से मुक्त होकर, रेखा करवट बदलकर सो गयी।....

सुबह जब रेखा उठी, तो उसे ऐसा लगा, जैसे रात-भर वह दुःस्वप्न ही देखती रही हो। उसे अपने सारे शरीर में दर्द-सा अनुभव हुआ। खिड़की खोलने पर सूर्य की स्वर्णिम रश्मियों को अपने सुहाग-कक्ष में चमकते देखकर भी वह आनन्दित न हो सकी। वह ध्यान से अपने नये घर की भित्तियाँ और छत देखने लगी। चारों ओर एक अजीब नीरवता और शिथिलता-जैसी छायी हुई थी। रेखा ने द्वार खोला, तो सामने एक बीस बर्षीया साँवली युवती, हाथ में ब्रुश लिये, मुँह धोने जा रही थी। उसने रेखा को निकलते देखा, तो हाथ पकड़कर अपने साथ लिये झूले में जा बैठी। दोनों मुस्कुराने लगीं, पर दोनों के हृदय सावन की घटाओं से घिरे गगन की तरह बरसना चाहते थे। कमला सोच रही थी, काश, मैं भी इसी तरह किसी के आलिंगनपाश से निकलकर, सूर्य की नयी किरणों में सारी सृष्टि को देखती! रेखा सोच रही थी, संसार बीती रात्रि को भूल जाय और मैं अपने पिछले संसार में लौट जाऊँ! पर दोनों असमर्थ थीं। एक का पिता ग़रीब था, दूसरी विवाह के बंधन में जकड़ चुकी थी, हृदय भारी होते हुए भी कुछ क्षण बाद ही, दोनों बिहस पड़ीं।

*

तीन दिन के अन्दर ही रेखा और कमला में स्नेह हो गया। यह स्नेह एक-दूसरे के लिए अवलंब सिद्ध हुआ। चौथे दिन कमला ने रेखा की सास से कहा—फूफी, आज भैया मुझे लेने जरूर आयँगे!

और सचमुच ही कमला उसी दिन अपने घर चली गयी।

रेखा की जेठानी उस दिन दोपहर को ही झगड़कर मायके चली गयी थी। वैसे

कोई विशेष बात न थी, गुलाब (जेठ) की माँ धूप में गेहूँ छान रही थीं, साथ-साथ अपने वृद्ध शरीर को धूप में गरमा भी रही थीं।

यद्यपि सर्दी बहुत अधिक न थी, तो भी गुलाब की पत्नी धूप में गरम पानी से अपने बच्चे को नहला रही थी। संयोगवश पानी की कुछ बूँदें छटककर गेहूँ में जा गिरीं। गुलाब की माँ ने कहा—देवी, ज़रा हटकर बच्चे पर पानी डाल। सर्दी तो इतनी अधिक नहीं है, जो बच्चे को धूप में गरम पानी से नहला रही है।

बड़ी बहू जलती-भुनती बोली—माँजी, फिर आपको क्यों सर्दी लग रही है, जो धूप में बैठकर गेहूँ छान रही हैं? बच्चे को तो कह रही हैं कि सर्दी इतनी अधिक नहीं है।

उसी समय रेखा नये, भड़कीले वस्त्रों में सजी सास से मायके जाने की छुट्टी माँगने आयी। देवी अपनी जलन में ही जल रही थी, उसे मालूम ही न पड़ा कि रेखा पीछे खड़ी है। जान-बूझकर उसने सारा पानी बच्चे पर उड़ेल दिया। रेखा की साड़ी पर पानी की कुछ बूँदें जा पड़ीं। जिस घर में आये उसे तीन ही दिन हुए थे, वहाँ वह कुछ कहती कैसे? पर उसका चेहरा अवश्य ही उतर गया।

सास सर उठाकर बोलीं—भले जाओ, छोटी बहू, भगवान तुम्हें खुश रखे!

रेखा तो चली गयी; पर वृद्धा शान्त न हुई। बोलीं—बेचारी कितनी विनयशील है, नयी साड़ी खराब हो गयी, पर एक शब्द मुँह से नहीं निकाला।

बड़ी बहू को जैसे बाण लगा। चार दिन से लगातार सास रेखा के रूप-गुण की सराहना कर रही थीं, जैसे हर बात दोनों की तुलना करते हुए कहती हों। बोली—माँजी, दूसरी तो तुम्हारे साथ झगड़ती है न?

वृद्धा उड़ती चिड़िया को पहचाननेवाली ठहरीं। बोलीं—मैंने तुम्हें थोड़े ही कहा, अगर कहूँ भी तो क्या? बेचारी की साड़ी खराब हो गयी, दुःख नहीं होगा?

—दुःख नहीं होगा!—एक-एक अक्षर पर ज़ोर देते हुए, देवी बोली—जो घर से कुछ लायगी, वही कुछ बोल सकेगी! जो लायगी ही कुछ नहीं, वह बोलेगी क्या खाकर?

सास बोलीं—तुम लेन-देन की बात निकालनेवाली कौन होती हो? भगवान् ने मेरे चन्दन के भाग्य में जो लिखा होगा, देगा ही!

देवी ईर्ष्या से जलकर बोली—जानती हूँ, मुझे देखकर ही इनके कलेजे पर साँप लोट जाता है! मैं तो आ ही नहीं रही थी। पहले आपके साथ रही नहीं हूँ क्या? बड़े सुख मिले हैं आपके हाथ! कहती थीं, विवाह में चलकर लाज रख लो! अब विवाह हो ही गया, सो तुम मुझे रहने थोड़े ही दोगी। माताजी तो कहती थीं, सुन्दर के पिता ही आकर तेरी सुध लेंगे! चल, सुन्दर, अपने कपड़े ले आ, तेरे ननिहाल चलेंगे!

संध्या को जब रेखा मायके से घर लौटी, तो देवी घर में न थी।

चन्दन ने अंगीठी पर हाथ सेंकते हुए कहा—माँ, भाभी इतनी जल्दी क्यों चली गयीं?

माँ ने सारा वृत्तांत अक्षरशः कह सुनाया। फिर बोलीं—न जाने कहाँ से यह राक्षसी मेरे गुलाब के गले आ पड़ी!

—भैया को इस भाभी की जरूरत थोड़े ही थी, उसे तो पाँच हजार रुपये चाहिए थे!

—बेटे, इसमें उसका क्या दोष? उन पाँच से पचास करने के लिए ही तो वह सागर पार गया है। आजकल रुपया ही रुपये को खींचता है। नहीं तो बेचारा इस काली कलूटी को क्यों लाता? आज भी कुछ-न-कुछ तो भेजता ही रहता है।

रेखा ने भोजन परोसते समय यह सब-कुछ सुन लिया था। उसने मन ही-मन निर्णय कर लिया था कि गुलाब अवश्य ही कोई बुरा आदमी होगा, जिसने रुपयों के लिए विवाह किया है। लेकिन जब सास चित्र की ओर आँखें उठाकर बातें करने लगीं, तो रेखा अपने विचार पर स्थिर न रह सकी। सुन्दर मुख, मुस्कुराने के लिए उद्यत-से अधर....रेखा चित्र से प्रभावित हुए बिना रह न सकी।

इतने में चन्दन बोला—माँ, तुम पाँच मिनट में ही दुनिया-भर की बातें बता देती हो!

—अब अगर घर-गृहस्थी की बातों में रस न लोगे, तो कब लोगे? तुम्हारे इन्हीं विचारों के कारण मैंने तुम्हें विवाह के बंधन में बाँधा है।

चन्दन ठंडी साँस लेकर, कपड़े बदलने के लिए जाते समय कहता गया—अगर मुझे यह मालूम होता कि तुम मेरे विचारों की बलि चढ़ाने के लिए ही मेरा विवाह कर रही हो, तो मैं विवाह ही नहीं करता! मैंने तुमपर विश्वास किया, परन्तु....खैर, मेरी बजाय, तुम्हारी गृहस्थी में रस लेनेवाली एक तो मिल ही गयी!

रेखा आकुल नेत्रों से पति की ओर देखती रही, तब तक, जब तक उसके साथ चलती परछाईं बड़ी होते-होते, उससे पहले ही कमरे में विलीन न हो गयी।

भोजन की थालियों से उड़ती हुई भाप को देखकर, रेखा सोचने लगी कि तीन दिन में जैसे युग ही बदल गया। इस घर में और उस घर में कितना फर्क है? वह घर ऊँचाई के शिखर पर से गिर रहा था, जबकि यह घर नीची घाटी में खड़ा होकर भी ऊपर उठने का स्वप्न देख रहा है। स्वप्न तो पहला घर भी कम न देखता था, पर दोनों के स्वप्नों में महान् अन्तर है। इस घर के स्वप्नों में सूर्योदय की लाली है और आशाओं की किरणें हैं। रेखा की सास सोचती रहती है, मेरे सभी पुत्र कमायँगे। मैं नौकर रखूँगी। मेरे घर में चाँदी के बर्तन और चीनी के चाय के सेट चमकते नज़र आयँगे। पर मृत्यु की-सी भयावह नीरवता भी इसी घर में अधिक है।

चन्दन कपड़े बदलकर कुर्सी पर आ बैठा, तो माँ बोलीं—चन्दन, अब पाकिस्तान छोड़ना ही पड़ेगा। पास-पड़ोस में अब इने-गिने घर ही बाकी रह गये हैं।

चन्दन का ध्यान आकर्षित नहीं हुआ।

माँ बोलीं—ऐसी फूल-सी सुन्दर बहू ला दी, फिर भी न जाने क्यों इतना उदासीन रहता है।

चन्दन की आँखें एक बार रेखा के गुलाबी मुख की ओर उठीं। तीक्ष्ण दृष्टि के स्पर्श से उसके कमल-नेत्र उन्मीलित हुए ही थे कि चन्दन ने माँ से कहा—माँ, अगर सुन्दर पुष्प में सुगन्ध न हो, तो उसकी प्राप्ति से कौन-सा आनन्द मिल सकता है?

माँ की समझ में कुछ न आया। चन्दन ने फिर कहा—इस देश को छोड़ने का मेरा जी नहीं करता। यहाँ अस्सी रुपये की नौकरी भी है और रहने को मकान भी। अगर पूर्वजों का स्थान छोड़ा, तो मकान और नौकरी के लिए भटकना पड़ेगा।

माँ कुछ कहना चाहती थीं, पर अपनी पूँजी का ध्यान आते ही वह चुप रह गयीं।

भोजन कर सभी अलग हो गये। रेखा अपने लिए और कोई जगह न देख, सास के चरण दबाने बैठ गयी। प्रायः यही हुआ करता था। जब उसकी आँखें निद्रित होने लगती थीं, तो वह अपने ठुकराये हुए सम्मान को हृदय से लगाकर, करवट बदलकर सो जाती थी। सुबह चौके में ही रहती थी कि चन्दन नौकरी पर चला जाता था। घर में अकेली रेखा सास और अपने दो छोटे देवरों का खिलौना बन जाती। छोटे गोप और श्याम रेखा के गोरे-गोरे मुख को बड़े चाव से देखते थे। पर रेशमी कपड़ों में सिमटी हुई नयी वधू यदा-कदा ही, अपने स्वप्न-लोक से मुक्ति पाने पर, अपनी बड़ी-बड़ी आँखें ऊपर उठाती। उस समय गोप और श्याम तालियाँ बजाते हुए, भाँजी-भाँजी, करते, चौके में जा माँ से लिपट जाते थे। फिर थोड़े समय के बाद चौके से बाहर निकलकर, कुर्सी अथवा चारपाई के पीछे छुपकर, अपलक रेखा के सुन्दर शरीर को निहारते रहते। रेखा की काली-काली आँखों के ऊपर उठने पर, बच्चों के तन-मन में बिजली-सी दौड़ जाती। रेखा सोचती, काश, मेरे रूप का जादू यों ही चन्दन को भी मोह लेता!

रेखा सास के काम-काज में हाथ बँटाने लगी, गुलाब की माँ पहले तो रेखा को बड़े लाड़-प्यार से अपने पास रखना चाहती थी। केवल खाना बनाने के समय एकाध छोटा-मोटा काम करा लेती, बस। पर धीरे-धीरे रेखा के रूप का जादू कम होने लगा। वह भयभीत हिरनी न लगकर, दौड़ती-फाँदती लोमड़ी-सी लगने लगी। उसने शीघ्र ही घर के कामों में रस लेना आरम्भ कर दिया। चौके में रखे हुए अनाज के पीपे और मसाले की शीशियाँ रेखा के हाथों का स्पर्श पाकर जगमगा उठीं। घर के सभी पदार्थ कहाँ रखे जाने चाहिएँ, वे कहाँ सुशोभन लगेंगे, इस

कार्य में रेखा सास से बाज़ी मारती हुई जान पड़ी। यहाँ तक कि कौन-सी वस्तु कहाँ रखी हुई है, इस बारे में, गुलाब की माँ को, रेखा से ही पूछना पड़ता। अब सास रेखा की समझदार आँखों, सुडौल शरीर, लचकदार कमर, फड़कते हुए कपड़ों में सिमटे हुए सौंदर्य को ईर्ष्या की दृष्टि से देखने लगी। रेखा सब-कुछ समझते हुए भी, न समझी-सी करती रही। वह चुपचाप निश्चिन्त पालतू पशु-सी कूदती-किलकती रही। अनजाने ही कभी मुँह से 'आह' निकल जाती, तो वह गोप और श्याम को गले से लगाकर मन शान्त कर लेती। यही उसकी वेदना का निदान था!

एक दिन सोने से पहले गुलाब की माँ ने रेखा को अपने पास बिठाकर चारपाई पर लेटे-लेटे कहा—गंगू की माँ के घर घड़े पर ढक्कन भी न था, लेकिन बहुएँ ऐसी मिलीं कि दहेज में सात-सात ट्रंक और ढेर-सारे गहने लेके आयीं। आज तो गंगू की माँ का पाँव धरती पर नहीं पड़ता। विलायत में दुकानें खोल ली हैं, दो-दो नौकर रखे हैं।

रेखा सास के चरण दबाती हुई, मुस्कुराती रही। अन्तर में कोई क्रोधित होकर कह रहा था, गंगू की माँ को मेरी-जैसी सुन्दर बहुएँ थोड़ी मिली हैं! परन्तु सौंदर्य का मान हो, तब तो उसका मूल्य आँका जाय! अन्यथा सौंदर्य का मूल्य ही क्या!

रेखा के मुख पर दुःख की लकीरें उभर पड़ीं।

—तुम इसे ताना समझ बैठी क्या? मैं तुम्हें कुछ नहीं कहती।

रेखा प्रकट में हँस पड़ी, पर हृदय और भी व्याकुल हो गया।

—तो फिर इस दृष्टान्त की क्या आवश्यकता थी, माँजी?—थोड़ा ठहरकर, रेखा ने प्रश्न किया और मन-ही-मन वृद्धा की चातुरी पर हँस पड़ी।

—बड़ी सयानी हो! अगर ऐसा समझती हो, तो भी मैंने कुछ गलत तो कहा नहीं। मैंने भी बेटे पैदा किये और पाले-पोसे हैं, कहीं से उठाकर तो ले नहीं आयी। —गुलाब की माँ व्यंग्य से बोलीं।

रेखा सहम-सी गयी।

*

दूसरे दिन रेखा के मायके से सुस्वादु व्यंजनों से भरा हुआ थाल आया, जिसमें डबल रोटियाँ, गोश्त, कबाब वग़ैरह थे। गुलाब की माँ पहले तो बड़ी प्रसन्न हुईं, पर जब सब वस्तुएँ उदरस्थ हो चुकीं, तो हँस-हँसकर कहने लगीं—राम की माँ को तो समधियों ने एक बड़ा-सा चाँदी का टिफिन-बाक्स भी खाने की चीजों के साथ दिया था!

राम की माँ गुलाब की माँ की चचेरी बहन थी। उसके घर में नौकर थे, घोड़ा-गाड़ी थी। रेखा ने सोचा, वह कह दे, माँजी, राम की माँ तो हमारे स्तर की नहीं हैं, फिर उनकी बातें क्यों करती हैं? परन्तु अपने पिता की पुरानी सम्पन्नता का ध्यान आते ही वह चुप रह गयी। उसे विचार आया कि अगर सास कह दें, तुम्हारे माँ-

बाप तो उसके स्तर के हैं, तो उसके हृदय का क्या हाल होगा ? उसने चुप रहना ही उचित समझा।

इतने में दूसरा वार हुआ।

—गोश्त के साथ ब्रान्डी की एक बोतल आनी चाहिए थी। इतना-सा पाने के अधिकारी भी हम नहीं रहे क्या !

रेखा मन-ही-मन खीजने लगी। न जाने और कौन-कौन-सी वस्तुएँ साथ आनी चाहिए थीं ! उसने पति की ओर देखा, तो वह भोजन में ही मगन था, मानो ऐसी बातों पर ध्यान देना उसकी शान के खिलाफ हो। पति की इस तटस्थता से रेखा को थोड़ा धीरज-सा बँधा, मानो डूबते को तृणावलम्ब मिल गया हो।

(३)

संध्या का समय था। सारा आकाश गुलाबी और धूमिल-सा होता जा रहा था, मानो सैकड़ों सुन्दरियों ने होली खेलकर, अपने रूप का अबीर-गुलाल आकाश के आँगन में बिखेर दिया हो।

माटुंगा की बस्ती से कुछ ही दूरी पर नारिकेल वृक्षों का छोटा-सा वन है। उसके बाद एक लंबी सड़क है। सड़क पार कर, रेखा समुद्र-तट पर एक बड़ी शिला पर बैठी सोच रही थी, कितने समय के बाद इस उन्मुक्त आकाश के नीचे साँस लेने का अवसर मिला है ! इस विचार ने उसे शिला के साथ जकड़-सा दिया। वह चाहती थी कि आज जी-भर क्षितिज की लाली देखती रहे।

जब से पाकिस्तान छोड़ा था, खुले आकाश के नीचे बैठने का अवसर रेखा को नहीं मिला था। माटुंगा में पगड़ी देने पर जो जगह मिली थी, उसमें दो छोटे-छोटे कमरे थे और बाहर आँगन तक न था। हैदराबाद के विशाल भवन में रहते हुए रेखा ने ऐसे छोटे-छोटे घरों की कल्पना भी न की थी। रेखा को जब छत के ऊपर का सितारों से जगमगाता आकाश नज़र आता, तो मानो वह कुछ खोयी-खोयी-सी महसूस करती। आज पहली बार परिवार के सदस्यों से पूछे बिना वह इस शिला पर आ बैठी थी।

धीरे-धीरे आकाश पर से गुलाबी रंग उड़ने लगा और उसपर सागर की-सी गहन नीलिमा छाने लगी। तभी दूर से किसी की आहट पाकर रेखा सँभलकर उठ खड़ी हुई। पत्थरों के ढेर से चन्दन टकरा गया, और गिरते-गिरते सँभला। रेखा ने उसे हाथ पकड़कर उठाते हुए कहा—कहीं चोट तो नहीं आयी ?—और उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही आँचल से धूल झाड़ने लगी।

चन्दन शान्त रहा कुछ देर बाद बोला—तुम्हें घूमने की तो मनाही नहीं,

फिर घर में किसी से कहे बिना यहाँ चले आने और व्यर्थ में सबको परेशान करने की क्या आवश्कता थी ?

रेखा कोई उत्तर न देकर, चुपचाप पति के साथ चलने लगी।

देहरी पर गुलाब की माँ गन्ना चूस रही थीं। रेखा को देखते ही, अधचूसा गन्ना हाथ में लिये, बोलीं—क्यों, घर काटता है क्या ?

आँचल ठीक करते हुए रेखा बोली—माँजी, आज घर में मन नहीं लग रहा था।

—वाह री दुनिया !....घर में मन नहीं लग रहा था ! और बाहर पत्थरों पर मन लगता है ! हम तो ढूँढ ढूँढकर थक गये। श्याम और गोप ने बताया कि वे बेंच पर बैठकर पतंगें उड़ाते रहे और तुम पत्थरों के ढेर पर बैठी भाड़ झोंक रही थी ! —फिर व्यंग्य भरी हँसी हँसकर गुलाब की माँ गन्ना चूसने में लग गयीं।

रेखा को मानो बरसने का अवसर मिल गया हो। चन्दन तो द्वार से ही, एक मित्र से मिलकर आता हूँ, कहकर चला गया था। सो रेखा अपने कमरे में जाकर आँसुओं से व्यथा की आग को बुझाने लगी। तभी उसे लगा कि सास पीछे खड़ी हैं। वह सहम उठी।

—मैंने ऐसी कौन-सी जली-कटी कह दी है तुम्हें, जो रो-रोकर आसमान सर पर उठा रही हो ? आजकल की बहुओं से तो तौबा !

रेखा और भी अधिक रो पड़ी। सास जल-भुनकर रह गयीं। रेखा ने बहुत चाहा कि किसी तरह आँसू थम जायँ, पर वेगवती अश्रु-धारा रुकती ही नहीं थी।

उस रात चन्दन काफ़ी देर तक जागता रहा। माँ के कहे हुए शब्द उसके कानों में गूँज रहे थे, आजकल की लड़कियाँ कितना तीन-पाँच सीख गयी हैं ! इतनी हिचकियाँ ले-लेकर रो रही थी, पर पति को देखते ही सब बंद हो गया !

चन्दन जितना ही उन शब्दों पर सोचता था, उतना ही उसके विचारों का घोड़ा द्विविधा के दुराहे पर अड़ जाता। आखिर इस लड़की को क्या चाहिए ? वह स्वयं क्यों नहीं देखती कि बम्बई का जीवन कितना कठिन है ! जगह लेने के लिए कितनी माथापच्ची करनी पड़ती है ! डेढ़ हज़ार की पगड़ी देने पर यह मकान मिला है ! रात-दिन भटकने पर एक-दो छोटी-मोटी नौकरियाँ हाथ लगी थीं, वे भी एक साल के अन्दर जाती रहीं। अब जाकर, नसरवानजी मिल में पैर जमे हैं। बी० ए० की परीक्षा न देकर यह क्लर्की स्वीकार की है।....यह लड़की इन-सब कठिनाइयों की ओर क्यों नहीं देखती ?

अधिक विचार करने के लिए चन्दन के पास समय नहीं था। उसे कई समस्याओं पर सोचना था। बम्बई के संघर्षमय जीवन ने उसके आदर्शों की नींव हिला दी थी। इतना होते हुए भी उसका मार्ग, उलझने की बजाय, और प्रशस्त होता

गया था। जिन नये राजनैतिक और आर्थिक विचारों को उसने अपनाया था, उनको सैद्धांतिक प्रयोग की कसौटी पर कसने के लिए उसे विशाल क्षेत्र मिल गया था। उसके उद्देश्य का दीपक सतत प्रज्ज्वलित रहा।

मिल के कार्यकर्ताओं की युनियन से अभी मामूली-सा परिचय ही हुआ था कि वह युनियन का सहकारी सेक्रेटरी चुन लिया गया। मिल में जितने शिक्षित कार्यकर्ता थे, चन्दन उनके लिए एक स्टडी-सर्किल चला रहा था। उसे इसी सर्किल में दूसरे दिन 'पूँजी और श्रम' विषय पर बोलना था। उसने कितनी ही पुस्तकों के उद्धरणों पर निशान लगा रखे थे। रोशनी जलाकर प्रकाश में वह पढ़ने लगा।

बिजली के प्रकाश से रेखा की आँखें खुल गयीं। चन्दन मानो कोई भूली हुई बात याद कर उठ बैठा। बोला—जब मैं अपने मित्र के यहाँ गया था, तब तुम रो क्यों रही थी?

रेखा ने कोई उत्तर नहीं दिया।

चन्दन फिर बोला—शायद, तुम्हें यहाँ आराम नहीं मिलता! सुन्दर-सुन्दर वस्त्र भी नहीं!

रेखा की पलकें एक क्षण के लिए ऊपर उठीं। चन्दन ने देखा, उनमें दुःख नहीं, तिरस्कार था। पहले तो चन्दन क्रोधित नहीं हुआ, पर जब तिरस्कार का कारण खोजने पर भी नहीं मिला, तो वह खीझ उठा।

स्कूल-कालिज का तार्किक चन्दन, देशप्रेमी चन्दन, विश्वव्यापी परिस्थितियों की गहन-से-गहन बात को समझनेवाला चन्दन, अपनी रेखा रानी की रहस्य-रेखा न समझ सका। पराजय का आभास होने पर और क्रोध पी जाने के कारण उसके माथे पर पसीने की बूँदें उभर आयीं। रेखा ने मुँह फेर लिया। वह रो पड़ी। आकुल मन से सोचती रही, सुन्दर वस्त्र कौन माँगता है? ठाट-बाट किसे चाहिए! पर जितना समय भी घर पर व्यतीत होता है, चन्दन पुस्तकों और अखबारों में ही खपा रहता है। काले-कलूटे मराठे और गुजराती मित्रों को साथ ले आता है। उनके साथ बैठकर, तर्क-वितर्क करता है। बड़े चाव से उनके दुःख-दर्द सुनता है।....पर मेरी ओर से इतना उदासीन क्यों? बदसूरत-अपाहिज भी नहीं हूँ, फिर भी पूछता तक नहीं....आखिर इस मनुष्य को कभी प्यार करने की 'फ़ुर्सत' मिलेगी भी या नहीं? प्यार-मनुहार की बातों को वह बेकारों का खेल समझता है। डींग मारने की भी आदत नहीं। पर यह भी तो नहीं सोचता कि पास-पड़ोसवाले क्या कहते हैं।....रेखा को याद आया, सुबह ही पड़ोसिन राधा ने कहा था, छोटी बहू, तुम्हारा पैर तो धरती पर पड़ता नहीं, पर पतिदेव का क्या हाल कर दिया है? मराठों की तरह सूट के साथ चप्पल पहनकर आफ़िस जाते हैं! कन्धे पर पुस्तकों की थैली लटकती रहती है....

रेखा क्या कहती ? उसकी आँखें नीची हो गयीं ।

पर राधा से रेखा की उदासी न देखी गयी । बोली—बात चुभ गयी क्या, बहू ? तुम्हारे पति सीधे-सादे हैं, तो क्या हो गया ? औरों से अच्छे हैं । यह तो तगादा नहीं करते कि आज सास ने यह नहीं भेजा, ससुर ने वह नहीं भेजा । आजकल के लड़के तो ससुराल से पैसे उगाह-उगाहकर गुलछर्रे उड़ाते हैं । घर में चाहे फूटी कौड़ी न हो, पर नाम धनपतराय ही होगा !

इस बात से रेखा को काफ़ी सान्त्वना मिली । आज उसने नीले आकाश के नीचे बैठकर सागर की चंचलता के दर्शन किये थे । उस दृश्य ने उसके हृदय की शून्यता का आभास करा दिया था । वह आकुल होकर सोचने लगी, आखिर यह विरोधाभास क्यों ? जो दृश्य मुझे इतना सुहाना लगा कि शिलाओं से जकड़कर मैं प्रकृति से वार्ता करने लगी, वहीं चन्दन को जरा भी आकर्षित क्यों न कर सका ?

काफ़ी देर तक यह प्रश्न उसके मानसाकाश में पंछी-सा उड़ता रहा और सोचते-सोचते ही, उसको आँख लग गयी ।

*

रेखा सुबह को उठी, तो सूर्य क्षितिज पर हँस रहा था ।

पड़ोस के मंदिर में घंटे बज रहे थे । घंटों की आवाज़ रेखा के कानों में प्रतिध्वनित हुई, तो उसे मायके की याद आ गयी । इस समय वहाँ गीता और सुरमिनी का पाठ होता था ।

रेखा उठी, तो उसने देखा, चन्दन और एक नवयुवक कुछ काग़ज़ों को ध्यान से देख रहे थे । वह मुँह धोकर दर्पण के सामने जा खड़ी हुई । उसे अपनी सूरत फीकी जान पड़ी । इतने में चन्दन कमरे से बोला—माँ, हीरे के लिए भी चाय भेजना ।

रेखा चाय लेने गयी, तो सास बोलीं—अब जाके उठी हैं रानी साहिबा ! देखो तो सही कितना दिन चढ़ आया है !

रेखा लज्जित हो गयी । वह चुपचाप बाहर चली गयी । जब रेखा ने चाय का प्याला हीरे के सामने रखा, तो कोई दो सुन्दर और सुडौल आँखें उसके प्रति कृतज्ञता के भाव से भरी हुई थीं । उस लड़के के कपड़े स्वच्छ थे । जब वह जाने लगा, तो रेखा को उसकी चाल भी अच्छी लगी, पर पैरों में चप्पलें पुरानी थीं ।

रेखा हँस पड़ी, आख़िर मित्र किसका है !

(४)

गुलाब की माँ के घर आज कई दिन के बाद चहल-पहल थी। सुस्वादु भोजन तैयार किया गया था। मसालों की गंध से सुवासित चौके में बैठी पुलाव पर से उड़ती हुई भाप को देखती रेखा सोच रही थी, आगन्तुक जेठ का स्वभाव कैसा होगा? क्या रेखा का पकाया हुआ भोजन रुचिकर लगेगा? क्या उन्हें इतनी फुर्सत मिलेगी कि रेखा के सुन्दर मुख की ओर देखकर कहें, रेखा, तुमने भोजन अच्छा बनाया है?

तीन नये ट्रंक, एक रेडिओ और छः-सात छोटे-छोटे नग आ पहुँचे। ग्रीष्म की कड़ाकेदार धूप में, टैक्सी से उतरकर, गुलाब ने माथे से पसीने की बूँदें पोंछ घर की ओर देखा। रेखा खिड़की के कोने से उन्हें निहार रही थी। गुलाब को अपनी ओर निहारते देख, वह कमरे में भाग गयी। बच्चे तालियाँ बजाते हुए ऊपर आये—माँ, दादा आ गये!

माँ ने पुत्र का माथा चूमा और गले लगाकर बोलीं—काश, आज तुम्हारे पिता होते।—फिर रेखा की ओर इशारा कर, बोलीं—गुलाब, यह है चन्दन की वधू!

रेखा की आँखें झुक गयीं।

सास ने बड़ी शान से कहा—क्यों, गुलाब, चन्दन के लिए सुन्दर बहू ढूँढ़ी है न?—अपना खिलौना दूसरों के खिलौने से सुन्दर पाकर जिस गर्व से बालक का हृदय फूल उठता है, वही गर्व, ये शब्द कहते समय, गुलाब की माँ के हृदय में था। सास की ओर ही दृष्टि रहते हुए भी रेखा ने देख लिया कि गुलाब उसके सौन्दर्य से प्रभावित हो चुका है।

*

एक सप्ताह बीत गया।

रेखा अब निस्संकोच गुलाब के सामने आती-जाती थी। गुलाब के कपड़े वह टाँगती थी। नये-नये जूते साफ कर तिपाई पर रखती थी। नेकटाइयाँ और रूमाल समेटते समय, उनमें से निकलती सुगन्ध से मुग्ध रेखा के हृदय में एक ललक-सी उठती, काश, चन्दन को भी रेशमी कपड़े पहनने और इत्र लगाने का शौक होता!

—रेखा, यहाँ क्या कर रही हो? मुझे कल-जैसी नमकीन रोटी तो पका दो।—गुलाब चौके की देहरी पर खड़ा होकर कहता। रेखा भूल जाती कि वह क्या सोच रही थी। जल्दी ही आलमारी बन्द कर वह चौके में चली जाती थी।

गुलाब विलायत से रेडिओ लाया था। घर रेशमी पर्दों से सजाया गया था। इस तरह घर ने एक नया ही रूप ले लिया था।

गुलाब की माँ कहतीं—गुलाब, अच्छा किया, जो रेडिओ ले आये। मैं सोचती थी कि कब हमारे घर में रेडिओ का गाना गूँजेगा। तुम्हारी रेखा स्नान-घर में रेडिओ के गाने गुनगुनाती थी, तो मैं मना कर देती थी।

—अच्छा! तो रेखा गाना भी जानती है!—गुलाब उछल पड़ा—मैं आज तुम्हारा गाना सुनूँगा!

रेखा का हृदय नाच उठा। वह हँसने लगी।

—हँसती ही रहोगी, या कुछ गाओगी भी?—गुलाब के स्वर में आग्रह था प्यार था....पर माँ ने मुँह फुलाकर कहा—बस भी करो, बहुत हुआ! मैं ऐसी उलूल-, जलूल बातें अपने घर में नहीं चलने दूँगी! तुम्हारी चाची कितनी बड़ी हैं, पर उनकी बहुएँ ऐसे ढंग से चलती हैं कि क्या कहना!

रात को गोप और श्याम जल्दी ही खाना खाकर सो गये। रेखा सास और गुलाब के लिए भोजन की थालियाँ मेजपर रखकर, अपने कमरे में जाकर एक फिल्मी पत्रिका पढ़ने लगी।

गुलाब ने कहा—माँ, जिसे सुन्दर और प्यार करने लायक पत्नी मिलती है, वही भाग्यवान है।

माँ ने उत्तर दिया—है तो ऐसा ही। पर तुम्हें क्या सुन्दर पत्नी नहीं मिल रही थी? तुमने स्वयं जाकर लड़कीवालों से कह दिया कि लड़की चाहे जैसी भी हो, पर रुपया बहुत मिलना चाहिए!

—माँ, मनुष्य कभी दो नावों पर पैर नहीं रख सकता। घर को भी तो बनाना था। जो पूँजी थी, उसे छगुनी करके लाया हूँ। विलायत का एक दूसरा चक्कर लगाया कि तुम सोने की थालियों में खाना खाओगी!

रेखा उस समय, पानी का गिलास मेज पर रखते हुए, जेठ की मुखाकृति देख-कर चकित रह गयी। उसका अन्तर कह रहा था, जेठ के पास प्यार है, पर उनकी उम्र केवल रुपये की धुन में बीती जा रही है, नष्ट होती जा रही है। कितना अच्छा होता, यदि इन्हें भी सुन्दर और गुणवती पत्नी मिलती!....

इतने में सास ज़रा चिल्लाकर, रेखा को सुनाने के लिए, बोलीं—हाँ, बेटे, सम्पत्ति न लानेवाली बहुओं को लाकर क्या सुख मिलता है! पति रात-दिन नौकरी करता है, पर इतना नहीं मिलता कि कहीं सैर-सपाटा कर मन बहलाय। ऐसी सुन्दरता फिर किस काम की?

रेखा, व्यंग्य समझते हुए भी, पत्रिका के पृष्ठों को देखती रही। आखिर बहू को क्या अधिकार है कि वह सास और जेठ की बातों में हस्तक्षेप करे?

पर उसके शरीर में एक ऐसी जलन पैदा हो गयी कि वह वहाँ बैठी नहीं रह सकी। वह उठकर दूसरे कमरे में चली गयी।

(५)

अष्टमी का दिन था।

गुलाब की माँ के घर में पास-पड़ौस की सभी कन्याएँ आकर इकट्ठा हुई थीं। गुलाब की माँ उन-सबके आगे सफेद चावलों के भात के ऊपर मुट्ठी भर-भरकर चीनी छोड़ती जा रही थीं। फिर उन्होंने तेल में अंगुली डुबो-डुबोकर सबके माथे पर लगाया। रेखा से बोलीं—रेखा बिटिया, पानी के दो-चार गिलास तो लाना, कन्याएँ 'अन्न-धन' कहें।

कन्याएँ शबनम-सी निर्मल हँसी हँस रही थीं। कुछ लजीले स्वभाव की थीं, छुप रही थीं। अफ्रीका-यात्रा के छः साल बिताकर आया हुआ गुलाब राय कुर्सी पर बैठा बड़े चाव से इन गँवार लड़कियों को देख रहा था।

लड़कियों ने थाली में हाथ धोकर, उनके चारों ओर पानी के छींटे देकर, जूठे पानी की बूँदें उड़ाते हुए कहा—अन्न दे, धन दे....डोलीअ में मुँह दे....काको खाये कोकला, जोगस जणे छोकरा....उखड़ी अमें कख, काको खरी आयो लख....उख-ड़ीअ में धाणियु, दुआ कन्स न्याणियुँ....

—सुनते हो, क्या कह रही हैं ? पत्नी भी मिली और पुत्र भी हुआ। लाखों कमाकर लाये हो। सभी कन्याओं को इकन्नी-इकन्नी दो !

गुलाब इकन्नी देते हुए उदास हो गया। सोचने लगा, पत्नी भी मिली और पुत्र भी हुआ, पर इस समय दोनों कहाँ हैं ? साढ़े छः साल पहले जब देवी इस घर में आयी थी, तब भी माँ ने कन्याओं को खिलाया था, परंतु तब उन्हें एक-एक पैसा दिया था। फिर शीघ्र ही गुलाब विलायत की ओर चला गया था। छः महीने के बाद स्वयं माँ ने लिखा था, पुत्र, तुम्हारी ओर से फूटी कौड़ी भी नहीं आयी है, यहाँ तुम्हारी पत्नी ने झगड़ा शुरू कर दिया है। आजकल की लड़कियों को कुछ भी कम मिलता है, तो सास का सर तोड़ने आती हैं। बात यहाँ तक बढ़ी कि एक दिन स्वयं देवी का पिता आया। कहने लगा, मैंने तुम्हें मोतियों से लदी बहू दी, पाँच हज़ार रुपये नकद दिये, तो भी तुम लोग मेरी बेटी को दुखी रखते हो। घर में नौकरों का-सा काम लेते हो। घर में न फल आते हैं, न दूध।....मेरी बेटी को भीतर-ही-भीतर समाप्त कर देने की ठानी है क्या ? निकालो मेरे पाँच हज़ार, नहीं तो कोर्ट में भिजवा दूँगा !....तब मैंने क्रोध में आकर कह दिया था, खूनी हम हैं कि तुम हो, जो हमें कोर्ट में भेजने की धमकी दे रहे हो ? ले जाओ अपनी लाड़ली को ! यहाँ तो यह भूखी मर रही है, देखें, तुम कितने दिन उसका पेट भर सकते हो !....तब देवी का पिता उसे बाह पकड़कर खींचता हुआ बोला, चलो, बेटी,

इनकी टायँ-टायँ नहीं सुनी जाती ! और देवी सबके सामने जूते की एँड़ी से टप-टप करती हुई, युद्ध जीते हुए सिपाही की तरह चली गयी थी।

तीन महीनों के बाद माँ ने फिर लिखा था, पुत्र, बधाई हो, तुम्हें पुत्र-रत्न प्राप्त हुआ है ! देवी अपने मायके है, अपने पोते को आँखों से न देख सकी, पर मेरी एक आकांक्षा पूरी हो गयी कि मैं अब दादी बनी हूँ !

उस समय अफ्रीका के जंगलों में फेरी करने के लिए गुलाब ने कपड़े की गठड़ी अपने कंधे पर उठा रखी थी। पर पत्र पढ़ने के बाद वह काफ़ी देर तक आरामकुर्सी पर लेटा रहा। उस समय वह एक मधुर कल्पना कर रहा था। एक छोटा-सा सुन्दर और गुलाबी चेहरा उसकी आँखों के सामने घूमने लगा था। अपने धूप में कुम्हा-लाये शरीर को दो कोमल हाथों से स्पर्श करते हुए अनुभव किया था। आज भी इन कन्याओं की गायी हुई, 'जोगस जगो छोकरा,' पंक्ति सुनकर उसके हृदय में याद की मीठी-सी टीस उभर आयी।

*

रात को बिस्तर पर सोते समय गुलाब ने माँ से पूछा—माँ, क्या देवी अब सदा मायके ही रहेगी ?

माँ को चोट-सी लगी।

बोली—पुत्र, चन्दन के ब्याह पर उसे हाथ जोड़कर लिवा लायी थी। अगर इतने दिन मायके न रहती, तो घर का भी कुछ नाम होता और चन्दन को भी दहेज से सजी बधू मिलती। ईश्वर करे, ऐसी पत्नी किसी को न मिले ! बड़ा अभिमान है उसे अपने पिता के पैसों पर।

—मैं भी पूरे तीस हज़ार लाया हूँ। जब नया मकान लूँगा, तो देखना, कैसे आकर पैर चूमती है !

रेखा उस समय दूध का प्याला लेकर पति के पास जा रही थी। उसके हृदय में देवी के प्रति तीव्र घृणा थी। पति को सारी कहानी सुनाते समय वह बोली—देवी इतनी नीच क्यों है ? जब पति ग़रीब था, तो मायके चली गयी। और अब पति कमाकर लाया है, तो उसके पैरों पर पड़ेगी ! धनी-मानी घरों की लड़कियाँ क्या इतनी ही नीच होती हैं ?

चन्दन बोला—स्त्री को सदियों से अपनी उदर-पूर्ति के लिए पति के आश्रित रहना पड़ा है, तो उसकी मनोवृति ऐसी कमज़ोर न होगी ?

रेखा एक क्षण अपने अन्तर को देखते हुए बोली—पर सब स्त्रियाँ ऐसी नहीं होतीं।

—जिनको बुद्धि और सहृदयता का थोड़ा-सा भाग भी मिला है, वे अवश्य ही ऐसी नहीं होतीं।

रेखा जेठ और पति की बातों पर विचार करती हुई सो गयी। जब सुबह उठी, तो उसे शोरगुल सुनायी दिया। उसने सोचा, नयी जगह लेने और नया फर्नीचर लाने के लिए माँ-बेटे में विवाद हो रहा होगा। पिछले तीन दिन से घर में यही बातें हो रही थीं। पर अब एक औरत की आवाज़ सुनायी पड़ रही थी। किवाड़ खोल-कर, रेखा ने बाहर आकर देखा, तो समाने देवी खाट पर बैठी हुई ज़ोर-ज़ोर से तू-तू मैं-मैं कर रही थी।

सास बोलीं—उस समय तो ऐसे भाग रही थी, जैसे परोसी हुई रोटी खाने जा रही हो! चन्दन के विवाह पर लिवा लायी, तो तीन दिन भी पैर नहीं टिके! सम-झती थी, ग़रीब हैं, सो निंदा करवाती फिरूँगी! ले आओ न अपने पिता को, जो तुम्हें लेने आया था? आये तो, उसे भी खुदा के घर भेज दूँ!

देवी भरे स्वर में बोली—वह तो सरे बाज़ार कहते हैं कि, अब तो तेरा पति कमाकर लाया है, जाकर उसी की शरण ले। मेरे पास अब तुम्हारे लिए फूटी कौड़ी भी नहीं है। सारे शहर में निंदा हो रही है कि विवाहित पुत्री को घर में बिठा लिया है।

—अब निंदा हो रही है?—सास इन शब्दों को ज़ोर से दुहराती हुई बोलीं—तो पहले क्यों रोब से लेने आया था?....ओखली में सर दिया जाता है, तो फिर मूसल से नहीं डरा जाता! करो ना अब निंदा का सामना!

रेखा ने देखा, जेठ अपनी पत्नी के पीछे खड़े होकर, माँ को शांत होने का संकेत कर रहे हैं। रेखा सोचने लगी, आख़िर पति पत्नी के अवगुणों पर पर्दा न डालेगा, तो और कौन डालेगा?

इतने में गुलाब की माँ बोलीं—अगर रहना है, तो अपनी तीसमारी को छोड़-के रह! साँझ को जाकर घर से कपड़े-लत्ते ले आना!

देवी घर में आकर रहने लगी, तो एक महीने के अंदर ही उसके ठाट बदल गये। अब वह बन-ठनकर रहने लगी। बिना बुलाये मायके से आने की बात वह भूल चुकी थी। वह मटक-मटककर गुलाब की माँ पर व्यंग्य-बाण छोड़ती थी। गुलाब की माँ वैसे तो गुर्राती शेरनी थी, पर गुलाब का दबदबा और उसका अपने प्रति घटता हुआ प्रेम देखकर, उन्हें भावी आशंका सता रही थी। वह देख रही थीं कि गोप और श्याम को आधा प्याला दूध भी नहीं मिल पाता, जब कि छोटे सुन्दर को देवी प्याला लबालब भरके पिलाती थी। एक दिन देवी को समझाने के लिए उसने अपना मुँह खोला ही था कि देवी व्यंग्य से बोली—ख़ैर मनाओ कि मेरा पति कमाकर लाया है, नहीं तो क्या यहाँ सब दूध ही पीते थे?

रेखा जब देवी को इस तरह विष-वमन करते देखती थी, तो सोचती थी कि क्या यह भी स्त्री का ही एक रूप है ?

धीरे-धीरे कहा-सुनी बढ़ने लगी।

गुलाब दिन-भर घर में बैठे-बैठे तंग आ जाता था। अगर ऐसे में आकर देवी कुछ कहती थी, तो क्रोध में अपने विवेक पर अंकुश रखना उसके लिए असंभव हो जाता था।

एक दिन देवी सिसकती-सिसकती पति से कहने लगी—आप इस घर को कभी तृप्त नहीं कर सकते। यहाँ कभी मसाले नहीं हैं, तो कभी घी नहीं है....और आज पापड़ नहीं हैं !—फिर एक ठंडी साँस भरकर बोली—दो पापड़ पड़े थे, सुन्दर ने माँगे, तो मैंने सेंककर दे दिये, अब गोप और श्याम भी हठ कर रहे हैं कि हमें भी पापड़ चाहिए !

गुलाब के तन-मन में आग-सी लग गयी। उसने बिना सोचे-समझे गोप और श्याम के एक-एक थप्पड़ लगा दिया।

माँ बोलीं—हाय राम !

गुलाब का सर चकरा गया। क्रोधित होकर बोला—बुढ़िया, तूने हाय राम क्यों कहा ?

—पुत्र, क्रोध करने की कोई बात नहीं है। सुन्दर बड़ी खुशी से खाये, मुझे कोई उज्र नहीं है। पर गोप और श्याम भी तो किसी माँ की कोख से पैदा हुए हैं। इतना-सा सुन्दर दो पापड़ खाये और गोप और श्याम देखते रह जायँ, क्यों ?—माँ अपने क्रोध को दबाते हुए बोलीं।

—मैं कह नहीं रही थी कि यह मेरे सुन्दर को कभी देख नहीं सकेंगी ?—देवी की तरह प्रकट होकर देवी बोली।

—कल की छोकरी ! तूने ही तो सारा घर बिगाड़ रखा है ! नहीं तो गुलाब कभी भाइयों पर हाथ नहीं चलाता था। दिन-भर पति के कान भरती रहती है....—गुलाब की माँ का धैर्य सीमा लाँघ चुका था।

पर गुलाब पर इसका उल्टा प्रभाव पड़ा। बोला—तुम्हारा मतलब है कि मैं पत्नी का पिछलग्गू हूँ ? उसी के आदेशों पर चलता हूँ ?

—और नहीं तो क्या ?—माँ अपनी सुध-बुध खो बैठीं—नहीं तो मेरे बच्चों पर क्यों हाथ उठाते ? क्या मेरे बच्चे इधर-उधर से, यों ही आये हैं ?

—मेरे बच्चे !—गुलाब का हृदय मानो हथौड़े की चोट से आहत हो उठा—मैं क्या पराया हूँ ?—फिर वह मौन होकर, दूसरे कमरे में चला गया।

दुपहर का भोजन भी नहीं हुआ। रोज़ की भाँति, आज रात उसने ताश भी नहीं खेले।

जब चन्दन लौटा, माँ ने सारी कहानी सविस्तार कह सुनायी। चन्दन ने कुछ भाई के व्यवहार पर असंतोष प्रकट करते हुए और कुछ माँ को धैर्य देने के विचार से कहा—माँ, आवश्यकता से अधिक धन आ जाने पर, मनुष्य कभी-कभी अपने होश गँवा बैठता है।

चन्दन ने ये शब्द यद्यपि धीरे-से कहे थे, पर न जाने कैसे उनकी भनक गुलाब के कानों में पड़ गयी। वह कमरे से ही चीख उठा—अगर मेरा होश ही ठिकाने होता, तो अपने पसीने की कमाई तुम लोगों पर क्यों लुटाता? जब से आया हूँ, छः सौ रुपये हवा हो गये।

चन्दन ने देखा, व्यर्थ ही झगड़ा बढ़ जायगा। इसलिए बोला—हो सकता है कि माँ ने तुम्हें समझने में गलती की हो, पर तुम्हें भी तो अपने ऊपर अंकुश रखना चाहिए था।

गुलाब चुप रहनेवाला नहीं था। बोला—जी, हाँ! अभी तक तो कुछ नहीं हुआ, पर जब अलग मकान लेकर रहने लगेंगे, तो यह सभ्य न जाने क्या-क्या कहेगा! मैं तो देवी पर विश्वास ही नहीं करता था। पर अब देखता हूँ, उसका कहा अक्षर-अक्षर सत्य है। मेरा धन देखकर तुम्हारे कलेजे पर साँप लोट रहा है। अगर हिम्मत है, तो कमाकर दिखाओ! दूसरों को देखकर क्यों जलते हो?

अब माँ ने भी मुँह खोला। बड़ा शोर मच गया। गुलाब सबको ऐसी-वैसी सुनाता रहा। अंत में थूकते हुए बोला—कंगाल थे, कंगाल ही रहोगे! अब तक अपना पसीना देता रहा, पर कद्र नहीं हुई! अब खुद ही तुम्हारी आँखें खुल जायँगी!

दूसरे दिन जब गुलाब, सुन्दर और देवी सचमुच ही होटल में जाने की तैयारी करने लगे, तो गुलाब की माँ आठ-आठ आँसू रोने लगीं। वह सारे दिन सिसकती रहीं, सारी उम्र ग़रीबी में रहे....फटे-पुराने कपड़ों में ढँके रहे....पेट पर पट्टियाँ बाँध-कर गुज़र करते रहे....अब जाके बड़ी मुश्किल से बेटे की कमाई पर कुछ सुख मिलने लगा, तो ईश्वर से यह भी नहीं देखा गया....

—भगवान् से नहीं देखा गया, या इस कंगले चन्दन से नहीं देखा गया, जो चला है टीका करने कि अधिक धन हाथ में आ जाने के कारण मैं अपने होश गवाँ बैठा हूँ?

माँ बोलीं—इसी ने तो सत्यानास किया है। अगर यह भी जाकर कहीं से कमा लाय, तो यह नौबत क्यों आय!

रेखा ने पहले सास की ओर देखा, फिर जेठ की ओर घूरती हुई, चौके में चली गयी।

गुलाब बोला—यह उसकी श्रीमती तो ऐसे घूरती है, जैसे मैंने उसके मायके की जायदाद छीन ली हो!

रेखा ने जाते-जाते सब सुन लिया।

वह सोचने लगी कि झगड़ा कहाँ से शुरू हुआ था और कहाँ जा पहुँचा। वह भली भाँति जानती थी कि चन्दन भी सब बातें सुन रहा है, पर आश्चर्य इस बात का था कि उसने चूँ तक नहीं की। पति के इस अटल, निर्वेद स्वरूप को रेखा ने मन ही-मन नमस्कार किया!

*

जो होना था, वही हुआ।

गुलाब राय ने कोलाबा में फ्लैट ले लिया। दो छोटे भाइयों के साथ माँ भी उसके साथ जानेवाली थी। रेखा का चेहरा उतरा हुआ था। उसकी सूजी हुई आँखों को देखकर, ऐसा लग रहा था, जैसे एक बड़ी मुद्दत से रोती रही हो।

जब दीवारों पर से चित्र उतारे जा रहे थे, तो वे इस बात की याद दिला रहे थे कि दो दिनों के बाद यह घर शून्य खंडहर-सा हो जायगा।....इतनी व्यथा होते हुए भी, रेखा सँभलकर रो रही थी कि उसके आँसू देवी न देख ले। देवी के आगे रोना उसे पसंद नहीं था। बर्तन बाँटे गये। अपने हिस्से में रखे हुए, दो-चार छोटे-मोटे बर्तनों को देखकर, रेखा का हृदय टूट गया। दीवार पर से घड़ी उतारते हुए, खिड़कियों पर से रेशमी पर्दे खोलते हुए, देवी रेखा की ओर देख, सास से बोली—ये सब सुन्दर के दादा लाये थे?

रेखा का इस ओर कोई ध्यान न था। वह तो वियोग की ज्वाला में जल रही थी। अच्छे या बुरे, अपने ही तो थे!

सास के कपड़े ट्रंक में रखते हुए रेखा बोली—माँजी, भूल मत जाना। प्रति दिन आती रहना। मुझे तो अकेला घर खाने को दौड़ता है।

देवी, जो जल्दी में अपने कपड़े बंद कर रही थी, बोली—हम तो जैसे घर में निठल्ली हैं, जो हर रोज़ आती रहें! और तुम चौधरानी बनके बैठी रहना!

रेगिस्तान की तप्त लू की तरह, एक-एक शब्द जलानेवाला था, पर रेखा और सास परस्पर एक-दूसरे को देखकर ही शांत रह गयीं।

देवी फिर बोली—माँजी, इसे कहो न कि स्वार्थ तुम्हारा है, अकेली तुम होगी, हम क्यों आकर यहाँ भटकेंगी?

रेखा ने चाहा कि वह अभी कह दे, देवी, बिना अग्नि के ही जल-भुनकर कोयला क्यों बनी जा रही हो? पर जाते हुए को क्या कहे? वह शान्त रही। आज देवी का पलड़ा भारी था, रेखा कुछ कह नहीं सकती थी।

विदा होते समय गुलाब की माँ की आँखों से आँसुओं का झरना बह निकला।

रेखा से गले मिलती बोलीं—तुम जैसी कोमल कली को छोड़कर जाने को जी नहीं चाहता, पर क्या करूँ, कहीं गुलाब बुरा न मान ले। सारा जीवन तो कष्टों में ही बिता दिया, अब बाकी घड़ियाँ तो सुख-चैन से बिता लूँ?....

श्याम नयी जगह जाने की खुशी में मस्त हो रहा था। हाँ, गोप कुछ उदास था। दोनों का माथा चूमते समय भी रेखा न रोयी। वे दोनों चले गये। देवी तो अपने चप्पल फटफटाती हुई रौब जमा रही थी। सारे घर में से मनपसन्द वस्तुओं को चुनने में ही वह अपने को व्यस्त किये हुई थी। इसी मस्ती में, 'अच्छा, रेखा' कहकर, मसाले की शीशियाँ बाल्टी में डाल, वह चलती बनी।

छोटा सुन्दर बोला—लेखा काकी, ता-ता....

रेखा ने जब इस छोटे शैतान का मुख चूमा, तब मानो किसी नदी का बाँध टूट पड़ा हो। घायल सिपाही की तरह वह औंधे मुँह बिस्तर पर जा गिरी और फूट-फूटकर रोने लगी।

तकिया गीला हो गया।

पर दुःख कम न हुआ।

(६)

रात के साढ़े दस बज चुके थे।

चन्दन अभी तक घर नहीं लौटा था। वर्षा थम चुकी थी। बाहर हवा घू-घू करती हुई, छप्परों से टकराती हुई, बूँदों को अपनी गोद में लिये बही जा रही थी। रेखा अपने गर्म शरीर पर हवा के ठंडे स्पर्श को पाकर और बेचैनी से सोचने लगी, ऐसी सूनी रातें कब तक रहेंगी?

आजीवन?

अपने इस विचार पर वह काँप उठी।

नहीं, नहीं!....ऐसा क्यों होगा? यह भी कोई जीवन है? पतझड़ की तरह वीरान, उजाड़ और सूखे पत्तों-सा निष्प्रभ!....सारे दिन केवल काम की चक्की में पिसते रहना....रेखा का मुख यों प्रशान्त सागर-सा शांत रहता है....पर वह सागर भी क्या, जिसमें कभी ज्वार न आय, तूफ़ान न आय?

*

रात्रि का अंधकार और भी गहरा होता गया।

रेखा ने जंभाई ली, तो छाती के दायीं ओर हल्का दर्द होने लगा। कारण जानने के लिए उसने हृदय को टटोला, तो हृदय ने सफ़ाई में एक अजीब चित्र पेश किया।

सुबह जब वह अपनी लम्बी, सघन और उर्मिल केश-राशि को सँवारती हुई दर्पण के आगे आ खड़ी हुई, तो उसके हृदय में एक अभिलाषा जाग उठी। जब से उसने यौवन में पदार्पण किया था, तब से वह चाहती रही थी कि वह अपने बालों में सुगंधित तेल लगाये....कि जब प्रियतम निकट आये, तो प्यार से उन्हें चूमें, मधुर-मादक स्पर्श से उन्हें सहलाये....तब तक, जब तक वह मधुरिमा और मादकता कंपन का रूप न ले ले।

पर चन्दन को फ़ुर्सत ही कहाँ!

वह दर्पण के सामने खड़ी बालों को सँवारती रही। जब बालों में रिबन के फूल बना चुकी, तो उसने एक छोटी-सी डिबिया उठाकर, अपनी माँग में सिंदूर लगाया। उस समय उसके होंठों पर एक मीठी मुस्कुराहट खिल गयी, जिसने उसके सारे मुख को प्रफुल्लित कर दिया। पर एकाएक वह फिर उदास हो गयी। दर्पण के पास से हट-कर उसने रिबन के फूल उतारकर फेंक दिये।

उसी समय किवाड़ खटखटाने की आवाज़ हुई।

चन्दन खाली हाथ हिलाते हुए, धीमी चाल चलता हुआ अंदर आया। रेखा पति का भोजन परोसने के लिए चौके में जाने लगी, तो चन्दन ने चारपाई पर बैठते हुए कहा—ठहरो।

रेखा पति की ओर न देख, सर झुकाकर बैठ गयी। आज वह इतनी दुःखी थी कि उसे इस बात का पता ही न लगा कि चन्दन कितनी देर से उसका उदास मुख देखता रहा है। प्रकाश में रेखा के बिखरे केश इतने सुन्दर लग रहे थे कि चन्दन के हृदय में एक बार अपनी पत्नी के लिए मोह उत्पन्न हो गया। पर रेखा को अभी तक अपनी ओर न देखते पाकर, वह ठंडी साँस लेकर बोला—अच्छा, जाओ, भोजन परोसो।

भोजनोपरान्त रेखा मुँह फेरकर बिस्तर पर पड़ रही।

चन्दन कुछ समय कमरे में टहलता रहा, फिर जाकर बिस्तर पर बैठ गया। पड़ोस की घड़ी ने ग्यारह बजाये।

यद्यपि रेखा को नींद एक क्षण के लिए भी नहीं आयी, मगर जब चन्दन ने पूछा, सो गयी क्या, तो उत्तर न दे चुपचाप पड़ी रही।

पर यह बचाव अधिक देर तक न टिक सका। जब चन्दन ने रेखा के शरीर पर अपना हाथ रखा, तो रेखा ने उसे चुपके से हटा दिया। चन्दन ने, एक अप-राधी की तरह, यह दंड स्वीकार कर लिया। फिर अपराध का प्रायश्चित करता-सा बोला—आज काफी देर हो गयी मुझे।

रेखा मौन रही।

—आज एक कामगार की स्त्री मर गयी थी, सो उसके अग्नि-संस्कार के लिए

जाना पड़ा। इसी लिए देर हो गयी।—चन्दन ने प्रशान्त स्वर में कहा और उसकी आँखों के आगे नागू कामगार का मलीन मुख चलचित्र-सा उभर आया। वह नागू अपनी पत्नी की अर्थी को इस तरह देख रहा था, मानो उसके सारे सुख उस अर्थी के साथ जा रहे हों।

चन्दन का हृदय व्याकुल हो उठा।

उसने रेखा को खींचकर अपनी बाहों में भर लिया। पहले तो रेखा निश्चल मूर्त्ति की तरह शान्त रही, पर कुछ क्षण बाद उसके नेत्रों से आँसू बहने लगे। वह सिसकने लगी। चन्दन रेखा के इस व्यवहार से अवाक् रह गया। शान्त स्वर में उसने पूछा—तुम रोती क्यों हो, रेखा?

रेखा और भी जोर से रोने लगी। पहले तो वह स्वयं ही नहीं समझ सकी कि आखिर वह क्यों रो रही है, किसलिए रो रही है। पर धीरे-धीरे उसकी अपनी धड़कनें उसे कहने लगीं, काश, चन्दन की कागज़ों पर चलनेवाली अँगुलियाँ कभी उसके बिखरे केशों को भी सहलातीं!....वह उसके सुन्दर मुख को अपने वक्ष से लगाकर कहता, रेखा रानी, तुम कितनी सुन्दर हो! तुम्हारा चन्द्रानन मुझे चकोर-सा मोह लेता है!....पर रेखा अपने मुँह से कैसे यह सब कहे! ये बातें भी क्या पतियों को समझानी पड़ती हैं?....

चन्दन झुँझलाकर बोला—आज तुम्हें बताना ही होगा कि तुम्हें क्या चाहिए?

रेखा विनम्र स्वर में बोली—कुछ नहीं।

—क्या तुम नहीं समझतीं कि तुम्हारा रोना मुझे कितना दुःख पहुँचाता है?

रेखा का हृदय आज इतना दुखी था कि उसे इस सहानुभूति में भी व्यंग्य दिखायी पड़ा। वह उसे सहन न कर सकी। अपने को पति के आलिंगन से मुक्त कर वह हवा के झोंके की तरह कमरे से बाहर निकल गयी।

रात्रि का गहन अंधकार देखकर उसकी वेदना और भी घनीभूत हो गयी। उसके हृदय में एक लहर-सी उठी, काश मैं भी उस कामगार की पत्नी की तरह मर जाती!

मृत्यु के अवसाद को उसका चेतन मन स्वीकार न कर सका। उसके मन में कामना उठी, काश, चन्दन बाहर आकर, अपनी भुजाओं में जकड़कर उसे अंदर ले जाता!

पर चन्दन बाहर नहीं आया।

मानसिक पीड़ा के कारण रेखा का शरीर शिथिल हो गया। विसुध होने से पहले वह स्नान-घर तक जा पहुँची। उस सँकरी कोठरी में उसकी वेदना का विस्तार चीत्कार-सा कर उठा, यह किस अपराध का दंड मिल रहा है मुझे? माँ, तुम ही बताओ कि तुमने मुझे फूलों की तरह क्यों पाला? मुझे कलियों की कोमल पंखुड़ियों

सा हृदय क्यों दिया ? इसलिए कि काँटे उसे चीर डालें ? हृदय फट रहा है, पर रक्त की एक बूँद भी नहीं गिरती कि दुनिया उसके दुःख को देख सके ! हृदय की पीड़ा अंदर-ही-अंदर दब गयी है । माँ, तुम्हीं ने एक दिन कहा था, रेखा मेरी एक सुन्दर स्वप्न है, मेरी कल्पित सुन्दरता उसके अंग-अंग में साकार हो गयी है ! माँ, आकर देखो कि किस तरह तुम्हारा स्वप्न टूट गया है !....

आकाश में बिजली चमक उठी।

स्नान-घर के किवाड़ काँप उठे । रेखा की सिसकियाँ सो गयीं, मानो वह चोरी करते पकड़ी गयी हो। मनुष्य की आकृति की जगह कुछ शब्द हवा से टकराते हुए अंदर आ पहुँचे, तुम रोती क्यों हो ? तुम्हें क्या चाहिए ?

मुझे प्रेम चाहिए ! ऐसा प्रेम....जिसमें मैं और तुम दोनों एकाकार हो जायँ, और सब-कुछ भूल जायँ ! भूल जायँ कि इस संसार का भी कोई अस्तित्व है.... हमारे शरीर पर सुन्दर, सुगन्धित वस्त्र हों, चारों ओर का वातावरण कामनाओं के मादक उल्लास में खोया हुआ हो ! संसार के सामाजिक और राजनैतिक....सारे आंदोलनों से परे, तुम्हारा जीवन मेरे लिए हो और मेरा तुम्हारे लिए....

हवा के झोंके किवाड़ों से टकराते रहे।

काफ़ी समय बीत जाने पर भी, रेखा के न लौटने पर, एक अप्रत्याशित आशंका से, चन्दन सिहर-सा उठा।

इतनी रात गये, वह कहाँ गयी होगी ?

गगन घनघोर घटाओं से घिरा हुआ था।

जी कँपा देनेवाली शीतल वायु अवसाद से आसन्न वातावरण को और भी ठंडा बना रही थी।

चन्दन झुँझलाकर बाहर चला आया।

घटाओं का बरसना आरम्भ हो गया।

चन्दन के सामने दो वर्ष पहले की रेखा का कोमल लतिका-सा शरीर, एक कमरे से दूसरे कमरे में फुदकते हुए दृष्टिगोचर हो रहा था। हवा के झोंको से उड़ती हुई चादरों को ठीक करते हुए, कोने में जाकर मैले कपड़ों को पोटली में रखते हुए, बच्चों के कपड़े सीते हुए, उसके होंठों पर नाचती हुई फिल्मी गानों की पंक्तियाँ मानो अब भी चन्दन के आस-पास गूँज रही थीं....

अपने विचारों में लीन चन्दन जैसे ही आगे बढ़ा, वैसे ही रेखा की सिसकियों की भनक उसके कान में पड़ी, मानो सख्त गर्मी से थके हुए पथिक को शीतल वायु का झोंका मिल गया हो।

चन्दन ने किवाड़ खोलकर, रेखा को अपनी बाहों में सिमटा लिया, और बाहों के सहारे उठाकर बिस्तर पर ला लिटा दिया। काफ़ी समय के बाद, रेखा के आँसू थमे।

चन्दन ने कोमल स्वर में पूछा—तुम रोती क्यों हो ? तुम्हें क्या चाहिए ?—और उसने रेखा का सर अपने घुटनों पर रख लिया।

—कुछ भी नहीं,—रेखा ने अपना सर पति की गोद में छुपाते हुए कहा।

—अब इस कुछ नहीं का कोई उपयोग नहीं, —थोड़ी देर बाद चन्दन बोला—तुम्हें यहाँ किसी वस्तु की कमी नहीं। उचित वस्त्र-भोजन, सभी-कुछ तो है।

—मैंने ब्याह केवल भोजन और वस्त्रों के लिए नहीं किया था। वे तो मुझे मायके में भी मिल रहे थे।—रेखा ने साहस के साथ उत्तर दिया, मानो आज वह कोई एक निर्णय कराके ही छोड़ेगी।

—तुम्हीं बताओ, कि तुमने ब्याह क्यों किया था ?

रेखा पति की ओर घूरती हुई बोली—ब्याह का अर्थ है सुख, और सुख केवल वहाँ है, जहाँ प्रेम है !

चन्दन ने कहा—तुम कैसे समझती हो कि मैं तुमसे प्रेम नहीं करता ? हाँ, इतना अवश्य है कि मेरा प्रेम केवल तुम तक सीमित नहीं है। मेरे प्रेम का दायरा व्यापक है, जिसमें लाखों स्त्रियाँ, बूढ़े और बच्चे आ जाते हैं, जो इस सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक शोषण की चक्की में पिस रहे हैं। मैं इस शोषण के निराकरण के लिए कृत संकल्प हूँ। इस कुव्यवस्था में परिवर्तन लाने के लिए ही मैंने अपने को समर्पित कर दिया है। केवल एक तुम्हारे प्रेम के लिए मैं अपने समाज-प्रेम की बलि नहीं दे सकता। रेखा, जब तक प्रेम और कर्त्तव्य में संघर्ष नहीं हुआ, तब तक मैं दोनों को निभाता रहूँगा। प्रेम और कर्त्तव्य एक-दूसरे के मार्ग में अवरोध बनकर नहीं आयें, तभी ठीक है। संघर्ष होने पर, एक का परित्याग करना पड़ता है।

रेखा चौंक-सी गयी।

वह पति की ओर निर्निमेष देखने लगी।

चन्दन को लगा, मानो वह अपनी इस करुण दृष्टि से पूछ रही हो, फिर मैं कहाँ जाऊँगी ?

चन्दन अपने स्वर को कोमल बनाता हुआ बोला—क्यों न तुम भी व्यक्तिगत प्रेम का त्यागकर, समष्टिगत प्रेम को अपना कर, मानव-जाति की सेवा में लग जाओ ?

—हम स्त्रियाँ क्या कर सकती हैं ?—रेखा ठंडी साँस लेकर बोली—हमारी सीमा है विवाह। मैंने समझा था कि इस सीमा पर पहुँचकर, मेरा जीवन प्रफुल्लित हो जायगा, पर केवल निराशा ही मेरे हाथ लगी।

—परन्तु पारिवारिक या शारीरिक प्रेम-मात्र ही तो ब्याह का एक उद्देश्य नहीं। विवाह तो इसलिए किया जाता है कि स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के साथी बनकर, मानव-

जीवन को और अधिक सुन्दर बनाने की चेष्टा करें। इस दिशा में विवाह एक साधन है, न कि साध्य।

—मेरे तो साध्य और साधन आप ही हैं। विवाहित स्त्री के पति के सिवा और कोई इष्टदेव नहीं, मैं तो बस इतना ही जानती हूँ।

—तुम ऐसी बातें इसलिए करती हो कि तुम्हारे मन में एक कष्टहीन, भोग-प्रधान और विलासी जीवन बिताने की इच्छा है। यही महत्वाकांक्षा तुम्हें शिथिल किये है। नहीं तो तुम अपनी उन्नति का भार मुझपर न छोड़ देतीं। यह सही है कि ऐसी मनोवृत्तिवालों की समाज में अधिकता है, पर इस स्वार्थपरता के संकुचित क्षेत्र से बाहर निकलकर, स्त्रियों को अपने स्वतंत्र अस्तित्व का विकास करना चाहिए। उन्हें अपने ज्ञान को विकसित करना चाहिए। उन्हें आँखें खोलकर देखना चाहिए कि संसार किन संघर्षों से गुज़र रहा है और उन्हें उसमें कितना भाग लेना है!

—आपके समान पत्रों और काग़जों को गले लगाकर दुनिया के दृश्य देखने चाहिए और अपने घरवालों को पूछना तक नहीं चाहिए?

—रेखा, क्या तुम मुझे एकदम ऐसा हृदयहीन समझती हो? जो पुस्तकों को प्यार करता है, वह क्या मनुष्यों को प्यार नहीं कर सकता? मेरे प्रेम की विशालता ने सृष्टि के कण-कण को आत्मसात् कर लिया है।

—जो प्रेम एक मेरी आत्मा को संतुष्ट नहीं कर सकता, उसमें विशालता क्या हो सकती है?

—मेरी रेखा रानी! मैं तुम्हें प्राणों से भी अधिक प्यार कर सकता हूँ, पर ऐसा करने से काम का समय जाता रहेगा। और यों मुझे अपने कर्त्तव्य से विमुख करने का उत्तरदायित्व तुम पर होगा!

—अच्छा, अब मैं कभी कुछ नहीं कहूँगी, कुछ भी नहीं माँगूँगी!

—तर्क से, विचार न समझ पाने पर, क्यों अपने को छुड़ाने का प्रयत्न कर रही हो, रेखा? इसमें दोष तुम्हारा नहीं, हमारे समाज का है, जो....

—अच्छा, जो जी में आये, वह समझिए!—रेखा ज़ोर से बोली।

चन्दन को ऐसा लगा, मानो बड़े कष्ट से जिस नौका को किनारे लाने का उसने प्रयत्न किया था, प्रबल लहरों ने उसे उसके हाथों से छुड़ाकर ठीक मझधार में पहुँचा दिया है। वह विवश माझी की तरह अपनी पत्नी की ओर देखता रहा, जिसकी आँखें आँसू पीकर सूज गयी थीं।

अंत में दोनों को नींद आ गयी।

(७)

सास के अलग हो जाने से रेखा बिल्कुल उदास रहने लगी। चन्दन के वेतन के १२५ रुपयों में से किराये के चालीस देना कठिन मालूम होने लगा। अधिक व्यय और एकाकीपन ने उसकी रही-सही खुशी भी छीन ली।

कभी-कदा कोई पड़ोसिन आ जाती थी। राधा से उसका स्नेह-सम्बन्ध जुड़ गया था। कभी-कभी चन्दन के मित्र उसे 'बहनजी' कहकर बोला करते थे, पर रेखा को वे किसी अन्य राह के राही मालूम होते थे। एक हीरे था, जो उसे 'रेखा भाभी' कहकर, देवर होने का अधिकार जताता था। रेखा उसे छोटा-मोटा काम भी बता देती थी। हीरे के पास स्कूल की नौकरी से छुट्टी होने पर, काफी समय बचा रहता था। जब रेखा बीमार पड़ी, तो हीरे ने ही उसकी देख-भाल की।

एक दिन। मध्याह्न का समय ढल चुका था। लगभग चार बजे होंगे। माटुंगा का वायु-मंडल शान्त था। कुछ बच्चों के गुली-डंडा खेलने की आवाज़ आ रही थी, अन्यथा सारा वातावरण सोया-सा लग रहा था।

इसी समय तेज़ कदम बढ़ाता हुआ हीरे आ पहुँचा।

रेखा बोली—अच्छा हुआ, तुम आ गये, मैं आज यहाँ बहुत उदास बैठी थी।

हीरे ने चारपाई पर बैठते हुए कहा—भाभी, आज क्या, उदासीनता तो तुम्हारे साथ हमेशा परछाईं की तरह लगी रहती है।...शायद तुम्हारी मानसिक स्थिति ही इसके लिए उत्तरदायी है।

—तुम ऐसा क्यों समझते हो!—रेखा चकित-सी हो गयी।

—सच-सच बता दूँ?

—नहीं, झूठ-झूठ बताओ!—रेखा हँसने लगी।

—एक दिन मुँह-अँधेरे जब मैं तुम्हारी दवा लेकर आया था, तब तुम्हारा बुखार काफी तेज था। तुमने मुझे चन्दन समझकर अपने जी का बोझ हलका करना चाहा। टूटे-फूटे वाक्यों में, तुम बोली थीं, तुम देवता हो....मुझे एक छोटी-सी कोमल हस्ती चाहिए...अच्छा, नहीं चाहिए....आदि।

रेखा की दृष्टि झुक गयी।

—एक बात पूछूँ, भाभी? सच-सच बताओगी?

—पूछो,—रेखा बोली—जब इतना-कुछ जान लिया है, तो बाकी छुपाने से क्या लाभ?

—बीमार होने से पहले, तुम्हारा क्या चन्दन से कोई मतभेद था?

रेखा के चेहरे का रंग उड़ गया। पृथ्वी की ओर दृष्टि किये वह धीरे-धीरे बोली—घर में अकेले बैठे-बैठे मेरा समय बढ़ जाता है। विशेषकर संध्या समय के छः बजे के बाद, जब दूसरे घर जगमगा उठते हैं, तब तुम्हारा साथी मज़दूर युनियन के आफ़िस में जाकर गरीबों के दुःख-दर्द सुनता है, उन्हें आवेदन-पत्र लिखकर देता है।....मेरा वह समय बड़े कष्ट से बीतता है। मगर एक छोटा-सा बच्चा ही मेरी आँखों के सामने होता, तो मैं उसे गले लगाकर सारे संसार को भूल जाती। पर उनका विचार है, किसी को जन्म देकर उसे भिखारी बनाना है क्या ? मैं तो मन-ही-मन कुढ़ती रहती हूँ। हृदय ने कहा, जिसकी कोई भी इच्छा पूर्ण नहीं हो पाती, इच्छाएँ उसके पास जन्म ही क्यों लेती हैं ? इस प्रश्न ने मुझे इतना व्याकुल कर दिया कि मैंने चाहा, दूसरे कमरे में जाकर, खूब चीख-चीखकर रोऊँ, ताकि मेरा अंतःकरण शांत हो सके। उस रात-भर मैं आँसू बहाती रही। यहाँ तक कि मेरी छाती में दर्द होने लगा। उसके बाद मैं बेसुध हो गयी। जब मेरा होश ठिकाने नहीं रहा होगा, तभी बड़बड़ा रही हूँगी, और तुमने सुन लिया होगा....

हीरे शांत रहा।

क्षण-भर के बाद बोला—पर इसमें चन्दन ने कोई भूल नहीं की।

रेखा ने घबराकर आँखें ऊपर उठायीं—तुम भी ऐसा कहते हो ? क्या गरीबों के पास बच्चे नहीं होते ? या केवल धनवानों के पास ही होने चाहिएँ ?

—देखा, भाभी, प्रश्न केवल बच्चे होने का नहीं है, उनके भरण-पोषण का भी है। यह प्रश्न जिस नग्न और उग्र रूप में मध्यम वर्गवालों के सामने आता है, उतना गरीबों अथवा धनवानों के नहीं। धनवान बच्चों का पालन-पोषण अच्छी तरह कर सकते हैं। उनके लिए बच्चे होना कोई चिंता का विषय नहीं है। गरीबों का तो जीवन ही अभावों की सँकरी नालियों में पलता है। ऊँचे रहन-सहन की वे कल्पना भी नहीं कर सकते। उनके बच्चे मांग-मूंगके टुकड़ों पर पलते हैं। उनके सामने शिक्षा का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। अशिक्षित रहते हुए, सात-आठ वर्ष के होते ही, वे कमाना आरम्भ कर देते हैं। परन्तु तुम मध्यवर्गीय स्त्री होने के नाते अपने बच्चे के खान-पान और शिक्षा, कपड़े-लत्ते आदि में जरा भी अभाव सहन नहीं कर सकोगी। तुम्हें पन्द्रह-बीस वर्ष तक बच्चे को पालना पड़ेगा, तब जाकर वह अपने पैरों पर खड़ा होगा। चन्दन, जिसने एक महान् कार्य में हाथ लगाया है, उसे इतनी फुर्सत कहाँ कि वह इससे अधिक कमा सके ?

—ठीक है। वे तो अपने महान् कार्य में लीन रहते हैं, और इस चहारदीवारी के अन्दर मेरा दम घुटता रहता है।

—रेखा भाभी,एक तुम्हीं नहीं, तुम-जैसी अनेक मध्यवर्गीय स्त्रियाँ हैं, जिनका

दम चहारदीवारी के अंदर घुटता रहता है, पर वे उस चहारदीवारी से ऐसे चिपकी हुई हैं, जैसे कंजूस अपने धन से।

—तुम तो अजीब बातें करते हो, हीरे। यह चहारदीवारी ही तो हमें अपने आँचल में ढँके हुए है। हम किवाड़ के बाहर पैर रखें नहीं कि रिश्तेदारों में नाना प्रकार की चर्चाएँ होने लग जाती हैं। वैसे ही हमें वे लोग गाजर-मूली से ज़्यादा नहीं गिनते। उनकी दृष्टि में हमारा अस्तित्व कोई महत्व ही नहीं रखता।

—पर मैं कहता हूँ, तुम जिन आदमियों की चमक-दमक देखती हो, वे भी अधिकांश तुम-जैसे ही हैं। ऋण और धनवान् रिश्तेदारों के नीचे वे इतने दबे हुए हैं कि उनके विकास का मार्ग ही बंद हो गया है। अगर वे भी यथार्थ को समझते हुए चलने की कोशिश करें, तो समाज का काफी दुःख घट सकता है। ऐसे कई घर हैं, जहाँ स्त्रियाँ और लड़कियाँ अपना सारा समय बनाव सिंगार और सैर सपाटे में ही बिता देती हैं। घर की बिगड़ी हुई आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए उनके हाथ आगे नहीं बढ़ते। किसी कला में प्रवीणता प्राप्त कर, उसका मनुष्यता के कल्याण के लिए उपयोग करने की उनमें लगन नहीं। आज समय आया है कि स्त्रियों को अपनी निष्क्रियता को त्याग, अपने पैरों पर खड़ा होकर, स्वयं को सबला सिद्ध करना है।

—हमारे समाज में स्त्रियाँ तभी अपने पैरों पर खड़ी होती हैं, जब उनका पति कमाने से विवश होता है। स्त्री का प्रमुख कार्य तो संसार चलाना है....

—यदि इस कर्त्तव्य-पालन के लिए उसे भी कमाना पड़े, तो उसमें बुरा क्या है?

—मैं जाकर कमाऊँ?....बस-बस, तुम न जाने और क्या-क्या कहोगे! कहाँ हमारा वंश और कहाँ स्त्री-जाति की कमाई! मैं अपने सुख के लिए, कुल की लुटिया थोड़े ही डुबोऊँगी!

—पर समय ऐसा आ गया है कि अगर कोई मनुष्य आदर्शों के साथ अपना जीवन बिताना चाहे, काला बाज़ार और चोरी-ठगी से दूर रहना चाहे, तो वह इतना नहीं कमा सकता कि अपने जीवन की सभी आवश्यकताएँ पूरी कर सके।

एक गहरी साँस लेती हुई रेखा बोली—ठीक है, जो है, वह अच्छा ही हुआ है। जहाँ और सारे दुख सहे जा रही हूँ, एक यह भी सही।

हीरे शांत रहा।

उसकी अंतरात्मा ने कहा, भ्रान्त विचारों में पड़कर मनुष्य अपने को कितना दुःखी कर लेता है! अचानक घड़ी की ओर देखकर वह बोला—ओह, इतना समय हो गया!—और चन्दन की मेज पर से आवश्यक पुस्तक उठाकर वह तेज़ी से बाहर चला गया।

रेखा सोचने लगी, आखिर ये पुरुष किस मशीन के पुर्जे हैं, जो समय-असमय

चिल्लाते रहते हैं ? इधर मैं हूँ, जो किसी उत्तम व्यक्ति के आश्रय में बातें करते हुए, बिना हिले-डुले अपना जीवन बिताने को तैयार हूँ।

सूर्य अस्ताचल पर अपने अंतिम दर्शन दे रहा था।

रेखा देख रही थी कि सामनेवाले घरों में आफ़िस से लौटे हुए पुरुष भोजन के खाली थैले हाथों में लिये, उल्लास के साथ चले आ रहे हैं। वायु का एक झोंका, नारिकेल वृक्षों से गुज़रता हुआ रेखा के कानों तक पहुँचा और कहता गया, रेखा, इतने मनुष्य तुम्हारे सामने से गुज़रते हैं, फिर भी तुम अकेली क्यों हो ?

(८)

दूसरे दिन संध्या को रेखा बाहर आकर आंगन के ओटले पर बैठ गयी। इतने में गोपी तरकारियों की पोटली सामनेवाले घर के ओटले पर रखकर सुस्ताने लगी। रेखा को सामने बैठा देखकर, सुस्ताना भूल, भागने-सी लगी, लेकिन रेखा उसे भली भाँति देख चुकी थी।

गोपी और तरकारियों की थैली ? रेखा के लिए अजीब बात थी। गोपी उसकी दूर की रिश्तेदार थी। हैदराबाद में अच्छे-खासे मकान की मालकिन थी। किराये से ही घर का काम चल जाता था। वैसे तो रेखा उसे कभी बाज़ार में देखती थी, तो आँख बचाकर निकल जाती थी, पर आज न जाने क्यों उसके हृदय में मनुष्य मात्र के लिए एक अलक्ष लगाव जाग गया था। जो दिन उसने बिस्तर पर बिताये थे, उन दिनों में उसकी यह भावना भड़क उठी थी। उसका मन इतना विश्राम पाने के बाद नवजात शिशु के शरीर की तरह कोमल हो गया था।

रेखा के हृदय में ऊँच-नीच की भावना के लिए कोई स्थान न था। रेखा ने पूरे ज़ोर से आवाज़ दी—गोपी !

गोपी रुक गयी। पर उसने पहले रेखा की ओर न देखकर, तरकारियों की पोटली को ओर देखा। फिर सर उठाकर बोली—रेखा हो, ठीक तो हो न ?

—आज तो ठीक हूँ। पर पड़ोस में होते हुए भी तुमने यह खबर न ली कि मैं कितने दिन बीमार रही।

रेखा ने देखा, गोपी झुँझला रही थी। वह 'जल्दी में हूँ,' कहकर चलती बनी।

रेखा मुस्कुरा दी। गोपी मार्केट में इतनी तरकारियाँ लेते समय लज्जित न हुई, पर मुझे देखते ही लज्जा में डूब गयी ! हम मध्यवर्गीय स्त्रियाँ भी कितनी अजीब होती हैं ! एक-दूसरे को अपना वास्तविक रूप दिखाते हुए भी डरती हैं। गोपी तो पाकिस्तान बनने पर ही मध्य वर्ग में आ गिरी थी। उनका पति जो वहाँ बेकार रह-

कर अपना मौरूसी धन भोग-विलास में लुटाया करता था, वह भी विवश होकर यहाँ 'सिंध-वर्क्स' में काम कर रहा था। तीन बच्चों की माँ गोपी, इसी थैली की तरह, घर का बोझ उठाते-उठाते थक गयी थी।

रेखा के मस्तिष्क में पास-पड़ौस की कितनी ही स्त्रियाँ घूमने लगीं। हीरे की बातें उसे मध्यवर्गीय स्त्रियों की स्थिति पर सोचने के लिए विवश कर रही थीं। वह सोचने लगी, मध्य वर्ग की स्त्रियाँ कितनी दुःखी हैं! नित्य हज़ारों चिन्ताएँ घेरे रहती हैं। बड़ी कठिनता से उनका जीवन यापन होता है। बाहरी लेन-देन की पूर्ति वे कभी कर नहीं पाती हैं। हर समय घर के खान-पान में कटौती करने की सोचती रहती हैं। पड़ोसिन राधा को ही देखो। बेचारी कटौती करते समय सोचती है बच्चों को कम दूँ! फिर सोचती है, नहीं। ये ही तो भविष्य के आधार-स्तम्भ हैं, इन्हें कैसे निर्बल किया जाय? पति का आधा प्याला दूध कम करने को भी वह तैयार नहीं। आखिर वही तो कोल्हू के बैल की तरह काम करके कमा लाता है। घर में सास है, ननद है, उनके लिए कटौती करना उसे उचित लगता है, पर इससे पहले वह अपनी थाली पर अपनी ही क्रूर दृष्टि देखकर काँप उठती है। सबसे अधिक काम करने वाली, सबसे अधिक चिन्ताओं में पिसनेवाली स्त्री सबसे पहले अपनी ही थाली में कटौती करना आरम्भ कर देती है। आज फल की, कल दूध की और फिर अचार, पापड़........

प्रति दिन नयी कटौती होने पर पुरानी कटौती का क्षेत्र पति, सास, ननद व बच्चों तक बढ़ता जाता है। तब भी सुगमता से घर का खर्च पूरा नहीं हो पाता।

घर में कुमारी कन्या लता-सी बढ़ती जाती है। मध्यवर्गीय स्त्री! बेचारी अकेले घर की सारी चिंताएँ ढोनेवाली, रात को पति की बाहों में क्षण-भर के लिए आधार ढूँढती है, पर वह दस-बारह घंटे काम करके लौटता है, उसे भी तो आराम चाहिए। यह विचारकर पति का शरीर दबाने लग जाती है। उसका हृदय कई कथाएँ कह जाता है, पर थके-माँदे पति के आगे ये कथाएँ उसके मुख से निकल नहीं पाती हैं। उसका शरीर एक अनोखी आग से दहक उठता है, और वह एक विवश आह भरकर रह जाती है। उसकी अतृप्त आत्मा सुबह के भोजन तक पति को निहारती रहती है। कल्पना में पति का हाथ उसके सर पर रहता है, मानो वह दिलासा देते हुए कहता है, देवी, तुम एक अजीब बोझ के नीचे दबी जा रही हो। तुम्हारे होंठ पीले पड़ रहे हैं और बाल सफेद हुए जा रहे हैं। पर मैं क्या कर सकता हूँ? मैं भी खून-पसीना एक कर सुखी जीवन व्यतीत करना चाहता हूँ, पर....अच्छा, अब काम पर जाने के लिए देर हो रही है। और वह किवाड़ तक जा निराश नेत्र ले लौट आती है।

रेखा को लगा, मानो वही निराशा उसकी आँखों में भी घर किये बैठी है।

पड़ोस के सभी घरों में बत्तियाँ जल चुकी थीं। सभी सुहागिनें अपने पतियों के लिए भोजन परोस रही थीं। परन्तु चन्दन....

रेखा का ध्यान टूट गया। हृदय की गहराई से एक करुण पुकार निकल पड़ी। वह अपने अँधेरे घर में प्रविष्ट हुई। उस अँधेरे में उसे गोपी की आकृति घूमती दिखायी दी। रेखा क्षण-भर के लिए हँस पड़ी, स्त्रियों का मन भी अजीब होता है! दूसरों का दुःख याद आते ही, अपना दुःख भूल जाती हैं। उसे दो-चार दिन पहले की घटना याद आ गयी। जीवन में पहली बार धमकी देते हुए, चन्दन ने उससे कहा था, अगर घर की सब्जी आदि छोटी-मोटी चीज़ें वह खुद अपने हाथ से नहीं लायी, तो वह रोटी नहीं खायगा।

उस दिन तो वह क्रुद्ध होकर बोली थी, किसी को इस बम्बई की हवा न लगे! इतने कुलीन पुरुष होकर, पत्नी से कहते हो, तरकारी ले आओ? ऐसे जीने से तो मौत भली है!

परन्तु जब सचमुच चन्दन बिना भोजन किये जाने लगा, तो वह सारा क्रोध आँसुओं से बहाती बाहर निकल पड़ी थी। उसके आश्चर्य की सीमा न रही, जब उसने देखा, उससे कम उम्रवाली दो लड़कियाँ पंसारी से मोल-भाव कर रही हैं। आगे चलकर उसे राधा मिली।

रेखा ने सीधे प्रश्न किया—पतिदेव कहाँ हैं, जो तुम तरकारी लेने आयी हो?

राधा ने सहज स्वर में उत्तर दिया—पुरुष बेचारे सारे दिन काम करके लौटते हैं, तो यहाँ आकर भी घर की साग-सब्जी लेने दौड़ें क्या? लोकल गाड़ियों में बैठ-बैठकर उनकी हड्डियाँ दुखने लगती हैं। हम क्या चारपाइयाँ तोड़ने के लिए ही पैदा हुई हैं?

उस समय रेखा को अपनी भूल दिखायी दी। उसने सोचा, वह हँस-हँसकर पति से जाकर कहेगी, वाह री बम्बई! यहाँ तो घर की गाड़ी खींचने के लिए भी दो बैल चाहिएँ!

अभी ये शब्द उसके विचार में आये ही थे कि चन्दन बस स्टाप की ओर दौड़ता दिखायी दिया। वह धीरे-धीरे घर लौट आयी। पर बाज़ार का चहल-पहल से भरा हुआ गतिशील संसार, आदमियों और मोटरों की तेज़ दौड़-धूप, दौड़-दौड़कर बसों को पकड़ने की क्रियाएँ उसके मस्तिष्क में घूम रही थीं। घर की भित्तियों के अन्दर उसे जीवन शान्त वायु-सा घुटता हुआ जान पड़ा।

आज भी अँधेरी कोठरी में जाते समय उसका मन उदास हो रहा था। अचानक ही गोप चला आया और बोला—रेखा भाभी, ये लो मेरे कपड़े! अब मैं तुम्हारे पास ही रहूँगा। चाहे मर ही क्यों न जाऊँ, पर गुलाब दादा के साथ नहीं रहूँगा!

रेखा ने उठकर बत्ती जलायी और गोप का सर चूमकर उसे गले लगाया। बोली—बहुत दिनों के बाद आये हो ?

वह उसके सर पर प्रेम से हाथ फेरने लगी। गोप को देखकर, उसका हृदय उल्लसित हो उठा। गोप का मन बहुत ही विकल था। उसकी आकृति इस बात की गवाह थी कि किसी ने बालक का मन दुखाया है।

—पहले यह तो बताओ, तुम्हारा चेहरा रुआँसा क्यों हो गया है ?

गोप ने अपनी डबडबायी हुई आँखें ऊपर उठायीं। वह रेखा के गले में बाहें डालकर सिसकने लगा। कुछ देर तक दोनों रोते रहे। जब गोप कुछ शांत हुआ, तब बोला—भाभी, मैं जैसे ही श्याम को पकड़ने को दौड़ने लगा, वैसे ही शीशे की मेज से टकरा गया। मेज गिर पड़ी। यह देखो, मेरी टाँग में घाव हो गया है। माँ तो देखते ही होश गँवा बैठी। वह दौड़ती हुई मेरी ओर आ रही थी कि कुर्सी से टकरा गयी।....कुर्सी जाकर शो-केस से लगी। शो-केस का शीशा भी टूट गया। बड़ी भाभी चौके से आँधी की तरह दौड़ती-दौड़ती आयी और शो-केस देख-कर बोली, जंगलियों को लाकर महलों में बिठाया है ! अन्धी, जरा आँखें फाड़कर तो चला कर ! तुम-सब निरे पशुओं के समान हो ! माँ ने तो चूँ तक न की। अपने फटे हुए दुपट्टे से कपड़ा फाड़कर मेरे पाँव पर बाँधने लगी। पर बड़ी भाभी शांत न हुई। हमें कोसती रही। मैंने भी कह दिया, मुझे क्या मालूम कि यह शीशा इतना कच्चा होगा ! तो आयीं सेठानी मुझे चाँटा मारने ! बोली, कच्चे के बच्चे ! ज्यादा चीं-चपड़ की, तो दाँत तोड़ दूँगी ! इस घर में तेरी एक भी न चलेगी ! मुझसे सहा न गया। मैंने कहा, तो तेरे बाप का घर है ? इतने में दादा बाज़ार से लौटकर आ पहुँचे। बोले, तो क्या तेरे बाप का घर है ? छोटे मुँह बड़ी बात न किया करो ! यह कहकर, उन्होंने भी एक थप्पड़ जड़ दिया। माँ भी मुझे ही बरजती रही। भाभी, प्रोग्रेस बुक (प्रगति पत्रक) पर हस्ताक्षर करवाते समय, माँ कहती थी कि जाकर गुलाब से पिता की जगह हस्ताक्षर कराओ....अब मैं कभी ऐसे घर में पैर नहीं रखूँगा ! बड़ी भाभी, गुलाब दादा और सुन्दर चाहें, जो खायें, पर हमें माँगने का कोई अधिकार नहीं। हमें ऐसी हीन दृष्टि से देखते हैं, जैसे हम भिखारी हों ! हम चाहे कुछ भी हों, जंगली हों, पर हमारी ग़रीबी हमें न्यामत ! हमें महलों की कोई आवश्यकता नहीं !

रेखा अब हँस पड़ी—तुम जंगली काहे को हो ! जंगली तो वे हैं, जो तुम्हें जंगली कहते हैं !

गोप सहानुभूति पाकर उत्साहित हो उठा।

वह कहने लगा—जंगली नहीं, तो और क्या हैं ? सारे दिन नकद नारायण की माला जपते रहते हैं। यदि कोई धनवान् घर आता है, तो उसकी जूतियाँ चाटने

लगते हैं। जैसे ही बाहर निकलता है, उसकी निंदा करने लग जाते हैं। दादा के मित्र क्या हैं, पूरे 'डपोरशंख' हैं। किराये का मकान है, लेकिन कहेंगे, हमारी बिल्डिंग है! किसी से एक हज़ार छीनेंगे, तो कहेंगे, दस हज़ार! कोई कहेगा, अमुक को कैसा मूर्ख बनाया कि अब कोर्ट में ही टँगा होगा! सारे दिन किसी को धोखा देने और ठगने में रस लेते हैं! बड़ी भाभी तो ऐसी है कि हमें देखते ही जलती है। हमारे पेट से निकालकर पशु को देते समय भी उसे पीर नहीं होती। एक दिन बिल्ली के दूध की लुटिया गिर गयी, तो उसने माँ का दूध उसे दे दिया। माँ तो वाहगुरु करके रह गयी, पर मैं दूध-पीता बच्चा थोड़े हूँ। उस दिन मुझे इतना दुःख हुआ कि मैंने दूध ही नहीं पिया। भाभी, बड़ी भाभी हमारे साथ बहुत बुरा बर्ताव करती है, तो क्या उसे अच्छा फल मिलेगा?....गुलाब दादा दूसरों के घर जाकर जुआ खेलते रहते हैं, और बड़ी भाभी जल-भुनकर रह जाती है। एक दिन काफी रात गये मैं जाग रहा था कि दादा शराब पीकर आये। बड़ी भाभी ने क्रोध किया, तो दादा गुनगुनाते हुए बोले, सुशीला तो मुझसे नहीं लड़ती? चंगा तो तुमसे सुन्दर है, पुष्पा तो जीती-जागती शराब है! उस दिन बड़ी भाभी इतना रोयी कि हिचकियों के मारे घर काँप रहा था। सुबह को उठी, तो वही गरजती हुई, ईर्ष्यालु बन गयी।

—अच्छा, दूसरी बातें फिर बताना। उठो, कपड़े बदल लो। मैं भोजन बना लूँ।

आज रेखा को लगा, घर की दीवारें भी बातें करने लगी हैं।

(९)

गोप अब चन्दन के घर आकर रहने लगा, इसपर चन्दन ने दो-तीन दिन तक कोई एतराज़ नहीं किया और खासकर जब रेखा ने सब बातें बताकर, यह भी कह दिया था कि गोप आपके साथ रहकर आप-जैसा बनना चाहता है, तो चन्दन और भी प्रसन्न हो गया था। लेकिन तीसरे दिन रात को काम से लौटते ही चन्दन ने अपनी जेब से चिट्ठी निकालकर रेखा को दी और कहा—अब गोप का यहाँ रहना ठीक नहीं।

रेखा ने पत्र पढ़ा, तो अपने को रोक न सकी। उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली। वह कुर्सी पर बैठ गयी और पत्र को हाथों में ही मसल दिया। पत्र में गुलाब राय ने और तो बहुत-सी अन्ट-सन्ट बातें लिखी ही थीं, यह भी लिखा था कि गोप अब दो साल के अन्दर कमाने लग जायगा, इस लालच में पड़कर

तुम उसे हमसे छीनकर ले गये हो। यह बात रेखा के लिए असह्य थी। उसका सारा तन-मन पीड़ा से भर गया। किसी तरह मन को थामकर वह लेट गयी।

दूसरे दिन बड़ी मिन्नत करके गोप को घर लौट जाने के लिए राजी कर सकी, इस शर्त पर कि वह भी उसके साथ जायगी।

रेखा को गुलाब राय के घर में पाँव रखते ही देवी का चेहरा देखने को मिला। वह चट से बोली—अच्छा हुआ कि गोप हमसे झगड़ा करके गया। तेरे दरशन तो हुए! भई, आप लोग तो ठहरे बड़े आदमी! आप क्यों हमारे पास आयेंगे!

रेखा तो फर्नीचर से चमचमाता घर देखकर अपने में ही सिमटी-सी जा रही थी। जेठानी के रूज-लिपस्टिक से रंगे चेहरे के आगे, उसे अपना सादा चेहरा फीका लगा। सकुचाकर बोली—माताजी और छोटा कहाँ हैं?

—क्यों री, माँजी से ही खास काम है क्या? अगर गोप के बारे में कुछ कहना हो, तो मुझसे क्यों नहीं कह देती? इस बारे में माँजी कर ही क्या सकती हैं?

मालूम नहीं माताजी कहाँ से आ पहुँचीं। दूध का प्याला देवी के सामने रख-कर, सुन्दर को गोद से उतारकर बोलीं—इसने तो हैरान कर दिया है। कहता है, दूध नहीं, चाय पिऊँगा।

रेखा ने छोटा को गोद में ले लिया और दूध का प्याला लेकर खिड़की के पास जा खड़ी हुई। नीचे एक छोटा पार्क दिख रहा था। रेखा बोली—देख, तू मेरे हाथ से दूध पी ले, तो नीचे पार्क में चलकर झूले पर चढ़ेंगे। खूब झूलेंगे, आकाश तक पहुँच जायँगे। फिर आकाश के तारे नोच लायँगे।

छोटा दूध पीने लगा और उधर देवी गोप को खरी-खोटी सुनाने लगी—मेरे पास क्या बाप-दादों का खजाना है, जो दोनों आकर मेरे ही सर पर बैठे हो? एक भाई का ही खून चूसने पर तुले हो? अब कहता है कि चन्दन भैया नहीं रखता पास में। वह भला काहे को रखेगा? एक को तो अपने पास रखकर देखे, आटे दाल का भाव मालूम पड़ जायगा!

—बेटी, तुम काहे को इतना बोलने लगी हो? हो सकता है, हम लोगों की किस्मत से ही गुलाब के पास इतना धन आया हो। पालन करना तो ईश्वर के हाथ में है।

—माँजी, तुम तो केवल बातें बनाना जानती हो। देखती नहीं हो कि कैसे मकान गिरवी रखकर आप लोगों को पाल रहे हैं वे! और कैसे सट्टा खेल रहे हैं!

—हमारा पेट भी क्या खाता है, दो-चार चपातियाँ ही तो। फिर हमारे लिए ही क्यों सट्टा खेलता होगा वह? जो शराब पीते होंगे, खाने-पहनने में ऐयाशी करते

होंगे, उनके लिए ही सट्टा भी खेलता होगा।—कहते-कहते सास रेखा को पीछे आने का इशारा करके दूसरे कमरे में चली गयीं।

देवी देवरानी का हाथ पकड़कर बोली—देखा तुमने, कैसे ताने देती है! हम लोगों को खाते-फिरते देखती है, तो जलन हो जाती है इसे। इतना कर्ज सर पर बढ़ चुका, पर इसका कलेजा ठंडा नहीं हुआ।

रेखा कुछ नहीं बोली। सास के पीछे चल दी। देवी जल-भुनकर, आँखें फाड़कर बोली—मैं कह देती हूँ, गोप को वापस ले जाना ही होगा! मैं इस ज़बान-दराज़ को एक पल भी यहाँ नहीं रहने दूँगी!

गोप क्रोध-भरी आँखों से बड़ी भाभी को देखने लगा। रेखा उसे भी खींचकर माँ के कमरे में ले गयी। सास ने भी ठीक उसी तरह रेखा का हाथ पकड़ा, जैसे कुछ समय पहले देवी ने पकड़ा था। बोलीं—सुनती हो, क्या कहती है? ऐसी बहू मिलने से, गुलाब कुँवारा ही बैठा रहता, तो अच्छा था। गुलाब कहता है कि अगले माह मैं मोटर लूँगा और इस रानी साहबा के बाप का प्रति दिन दीवाला निकल रहा है!

रेखा को सास-बहू के बीच में इतनी खटास बहुत बुरी लगी। इतने में गुलाब राय भी माँ के कमरे में आ बैठा। ठट्ठा मारकर गोप से बोला—मुझे तो मालूम था कि चन्दन तुम्हें तीन दिन भी अपने पास नहीं रखेगा!

इस व्यंग पर रेखा चौंक उठी।

देवी भी अपने पति के पीछे खड़ी होकर तीखे स्वर में बोली—एक बार जो थूक ज़मीन पर फेंक दी गयी है, उसे चाटना नहीं होगा। हमें कोई परवाह नहीं, अगर गोप जाके कमाकर इन्हें खिलाये।

रेखा देवी के व्यंग को बड़ी मुश्किल के साथ सहनकर बोली—अभी तो इसके कमाने का प्रश्न ही नहीं उठता। अभी तो इसकी तालीम के लिए पैसे चाहिए।

—वाह, बड़े चालाक हो तुम लोग, जो गोप की कमाई के लिए तो तैयार बैठे हो, लेकिन एक-दो साल उसकी तालीम के लिए पैसा खरचने के लिए तैयार नहीं! जैसे एक ही भाई ने सबको पालने का ठेका ले रखा हो!—देवी बोली।

गुलाब राय बोला—अच्छा-अच्छा, इसकी सारी कमाई ले लेना। दो साल के अन्दर-अन्दर मैट्रिक तो कर ही लेगा। फिर काम में लग जायगा। माँ और छोटे भैया को कुछ देने की फिकर मत करना।

रेखा समझ नहीं पा रही थी कि वह ये ताने कैसे बर्दाश्त करती जा रही है! गोप तो उसके सामने घर का एक लड़का था। कमाने-न कमाने की तराजू में उसकी कीमत नहीं कसी थी। आखिर फुँफकार कर बोली—ऐसा लगता है कि गोप की आप लोगों को बहुत चिंता है! तो फिर आप ही इसे रखिए न अपने पास!

—ना, बाबा,—देवी दोनों हाथ जोर से हिलाकर बोली—हमें तो अपनी ही

चिंता काफ़ी है। अब और भी एक मुसीबत कौन मोल ले ? कभी सूट नहीं है, कभी बूट नहीं है ! कभी स्कूल की फीस चाहिए। हर वक्त कोई-न-कोई चीज चाहिए।

—अच्छा-अच्छा, मत रखना। तेरे पास रहता ही कौन है ? जहाँ इतने लोग फ़ुटपाथों पर सोते हैं, वहाँ एक मैं भी गुज़र कर लूँगा।

—अच्छा, ये बात है ? तीन दिन तक ठोकरें खाकर भी तुमने घमण्ड नहीं छोड़ा ? अब फ़ुटपाथ की भी ठोकरें खाकर देख ! तेरे-जैसे भाई के बदले तो जानवर को पाला जाय, तो वह अच्छा !—गुलाब क्रोध से काँपता हुआ बोला।

अब माँ भी उबल पड़ीं—बेटा गुलाब, ज़रा ज़मीन की ओर देखकर चलो ! क्या मालूम, हमारे ही भाग्य से तुम्हें इतना धन मिला हो। मुझे कोई और ठिकाना होता, तो इसी क्षण बच्चों को गोद में छुपाकर चली जाती।

रेखा जानती थी कि ऐसी रोज़ की खींचा-तानी से क्या परिणाम निकलता है। इसलिए उसने गोप को वहाँ छोड़ना पसन्द नहीं किया। वह उसको लेकर घर चली आयी।

गोप बोला—देखा, भाभी, कैसे हैं ये लोग ! थोड़ा-सा पैसा इकट्ठा कर लिया है, तो चाहते हैं कि हम लोग इनके सामने नाक रगड़कर चलें। अपने ऊपर तो कर्ज़ा करके भी रुपया लुटाते हैं। लेकिन हम ठहरे उनके लिए भिखमंगे, जिनकी तालीम के लिए भी खर्च नहीं करना चाहिए !

रेखा मन-ही-मन हँस दी। वह सोचने लगी, कोई बच्चे से समानता से बातें करे, तो कितनी सयानी बातें करता है वह ! परन्तु इन दो सालों के अन्दर जेठ की नीयत कितनी ख़राब हो गयी है ! साहूकार न सही, गरीब भी नहीं कह सकते, उसकी हालत तो ऐसी लगती है, जिसकी जड़ें तो कीड़े खा गये हों, पर ऊपर से सूखे पत्तों-वाली डालियाँ सर ऊँचा करके आकाश को छूना चाहती हों।

(१०)

गोप के आ जाने से, रेखा का एकाकीपन काफ़ी दूर हो गया। गोप जब उसके साथ बैठकर स्कूल की बातें करता था, तो रेखा को अपने निश्चिन्त स्कूली जीवन की याद आ जाती थी। वह उस छोटे-से, पर सोद्देश्य जीवन पर विचार करने लग जाती थी। पर इस मनोरंजन के साथ-साथ खर्च की समस्या भी उठ खड़ी हुई।

एक दिन रेखा गोप का फटा पायजामा सी रही थी। इतने में गोप स्कूल से लौट आया और अपना जूता हाथ में उठाकर बोला—भाभी, देखो, यह यहाँ से फट गया है।

रेखा ने देखा, जूते का तला बिल्कुल गल गया था, जिसमें ताँबे के पैसे के बराबर छेद हो गया था। गोप थैला टाँगकर चारपाई पर बैठ गया।

—क्यों, आज चौबेजी भोग लगाने की जगह, खटिया पर विराजमान हो रहे हैं!—रेखा ने चिढ़ाने के लिए कहा।

गोप नीचे पृथ्वी की ओर देखता हुआ बोला—भाभी, मुझे नयी छतरी ले दो। यह छतरी पकड़ने की जगह से टूटी हुई है। लड़के मुझे 'बुड्ढा-बुड्ढा' कहकर चिढ़ाते हैं!

गोप की आँखें भर आयीं।

रेखा के हृदय पर चोट-सी लगी। उसने उठकर गोप को चूम लिया। उसके नेत्र भी भर आये। गोप को धैर्य बँधाने के विचार से बोली—दसवीं श्रेणी में पढ़ते हो, पर कभी-कभी बच्चे बन जाते हो। तुम्हें साहस से काम लेना चाहिए!

वह गोप के लिए थाली में खाना लेकर आयी, तो उसे हीरे से कहे हुए अपने शब्द याद आ गये, नौकरी करके कुल की लुटिया थोड़े डुबोऊँगी!....वह सोचने लगी, अब तो कुल की लुटिया स्वयं ही डूब रही है। कुल के होनहार बच्चे निराश और निर्बल हुए जा रहे हैं।

दूसरे दिन गोप को स्कूल भेज, रेखा विचारों में विचर ही रही थी कि डाकिये ने आकर पत्र दिया। पत्र पढ़ने के बाद रेखा की आँखों के आगे अँधेरा छा गया। कुछ क्षण के लिए वह निश्चल मूर्ति-सी बैठी रही। जब हवा के झोंके से पत्र उड़ने लगा, तब जाके उसकी मूर्छना टूटी। पत्र को मरोड़ती वह बड़बड़ाती रही, शीलवंती अब क्या करेगी? बेचारी अपने बच्चों को तड़पते कैसे देख सकती होगी....उसकी आँखें आँसुओं से तर हो गयीं। केवल शील ही नहीं, जिसे देखो, वही चिंता से आकुल है। सभी रुपयों का राग अलाप रहे हैं। आखिर इसका कारण क्या है? प्रत्येक अपने स्तर से गिरता जा रहा है।....

यद्यपि रेखा की पीठ किवाड़ की ओर थी, तो भी किसी के आने की आहट पा, अपने शुष्क होंठों पर जिह्वा फेरती हुई, बोली—गोप, पानी का गिलास तो देना।

पर जब चन्दन ने आकर उसे पानी का गिलास दिया, तो रेखा के सजल और आश्चर्यचकित नेत्र चन्दन के मुख पर अटक गये। चन्दन ने देखा, रेखा के नेत्र तीव्र वेदना से ओत-प्रोत थे। चन्दन मन-ही-मन हँस पड़ा, यह अभिमानी लड़की कभी दुःख का आँचल छोड़ेगी भी, या आजीवन आँसू ही बहाती रहेगी।

इतने में हीरे आ पहुँचा।

बोला—चन्दन, कलवाली मीटिंग किस जगह होगी? कोठारी अपने गाँव चला गया है! उसका घर पाँच सप्ताह तक बंद रहेगा?

—अब तो मेरे घर में काफ़ी जगह है, इसलिए यहाँ ही होगी।

प्रचंड वायु के कारण खिड़कियाँ किवाड़ों से टकरा रही थीं। आकाश पर बादल छाये हुए थे।

चन्दन बोला—वर्षा होने की संभावना है, हीरे, जरा ठहरकर जाना।

छलकते हुए आँसुओं को आँचल से पोंछते हुए रेखा बोली—दुनिया में यह-सब क्या होता जा रहा है, हीरे? दो- एक रिश्तेदारों के सिवा सभी चौपट हुए जा रहे हैं। इस प्रकार की हवा चलने का भी तो कोई कारण होगा...

हीरे ने देखा, रेखा की भवों में प्रश्न था।

चन्दन निश्चल खड़ा रहा। हीरे की भृकुटियों ने मानो शान्ति से चन्दन से कह दिया हो, रेखा और तुम्हारे बीच में जो भित्ति है, आज उसे गिराने का अवसर मिला है।

चन्दन ने निचला होंठ गोल कर, मुस्कुराते हुए, नज़र फेर ली, मानो हीरे की बात का उत्तर दे दिया हो, जब वह मुझे समझने के लिए तैयार ही नहीं, तो मैं क्या कर सकता हूँ?

हीरे ने कहा—भाभी, तुम्हारे तो घर में गंगा बह रही है! ऐसे प्रश्न मेरी अपेक्षा चन्दन तुम्हें अच्छी तरह समझा सकेगा।

यह कहकर वह उठ खड़ा हुआ, परन्तु किवाड़ तक पहुँचने से पहले, उसने रेखा को विवश नेत्र उठाकर कहते सुना—इनके पास मेरे लिए फ़ुर्सत कहाँ? इन्हीं को क्या, शायद ईश्वर को भी मेरे प्राण लेने की फ़ुर्सत नहीं!

हीरे मन में सोचता चला गया, रेखा-जैसी हठीली लड़की को समझाने के लिए, अध्यापक के-से धैर्य की आवश्यकता है।

वर्षा का एक प्रबल झोंका आकाश की कालिमा को धोकर, दो-चार मिनट में ही शांत हो गया। कमरा फिर रोशनी से जगमगा उठा। चन्दन के होंठों पर मुस्कुराहट दौड़ गयी। बोला—आज तुम्हारे चन्दन को मार्ग में ही उलझी हुई अपनी रेखा रानी को मंजिल तक पहुँचाने की फ़ुर्सत मिल गयी है।

रेखा उसके मुख की ओर देखती रह गयी। मानो उसे विश्वास ही नहीं हो रहा हो कि काली-काली घटाओं में भी सूर्य चमक सकता है! संदेहास्पद दृष्टि से पति की ओर देखती हुई बोली—कहीं ऐसा न हो, सावन का सूर्य घटाओं में छुप जाय और मार्ग-दर्शक पथिक का हाथ छोड़कर चला जाय?

—मार्ग-दर्शक की सफलता इसी में है कि वह अँधेरे में भी पथिक को राह दिखा सके। शर्त यह है कि पथिक स्वयं अपना आँचल न खींच ले! अच्छा, यह तो बताओ, संसार की गति-विधि देखने की फ़ुर्सत तुम्हें कैसे मिली?

रेखा ने तत्काल शीलवंती का पत्र चन्दन के हाथ में थमा दिया।

शील ने लिखा था:

रेखा रानी,

अजीब स्थिति का सामना करना पड़ रहा है। मेरे पति ने दो हजार रुपये खर्च कर रेशम के कपड़े की केबिन ली। लकड़ी की बनी हुई छोटी-सी दुकान। हैदराबाद में जो दुकान पाँच हजार में बेच आये थे, उसे याद कर हमारे देवता कूच कर जाते हैं। माह-दो माह काम चला, पर आठ बच्चों की परवरिश इससे क्या होती! मैंने अपने आभूषण गिरवी रख, इधर-उधर से इकट्ठे कर, दो हजार रुपये दिये, ताकि वे दुकान में आवश्यक माल भर सकें। तीन दिन के बाद जाकर देखा, केबिन का ताला टूटा हुआ है, दोनों किवाड़ खुले हुए और सारा सामान गायब!

फिर क्या बताऊँ, बहन, वे कपड़े का ठेला चलाने लगे। जो हैदराबाद में दुकान पर बैठे-बैठे माल का आर्डर लेते-देते थे, ठेला क्या चलाते? ठेला चलाने से उनके हाथों में घाव हो गये। अजमेर की कड़ी धूप में भटकते-भटकते उनकी आकृति काली पड़ गयी।

चार-पाँच दिन हुए, मैं उनके थके हुए शरीर को दबा रही थी, तो वे बोले, आज कंधों में बहुत दर्द है।

मैंने कहा, शायद, ठेला चलाने से हुआ हो!

वे बोले, पगली, ठेला कहाँ से आया? बचे-खुचे कपड़े की गठरी बनाकर फेरी करता हूँ!

यह सुनकर, मेरे तो प्राण सूख गये।

वे बोले, अभी क्या हुआ है? समय इतना खराब आ गया है कि अच्छे-खासे पढ़े-लिखे लोग भी इधर-उधर मारे-मारे फिर रहे हैं। हम-जैसे अपढ़ों को तो मिल में काम करना पड़ेगा। वह भी, जब पति-पत्नी दोनों मिलकर कमायँगे, तब जाकर गुज़र होगी। नहीं तो तुमने जो ये छोटे-छोटे पिल्ले निकाल रखे हैं, वे सब भूखों मर जायँगे!

बहन, क्या बताऊँ, स्वभाव ऐसा चिड़चिड़ा हो गया है कि जरा-सी बात पर भी खाने को दौड़ते हैं। बहन, इतने दिनों तक मैंने अपने दुःखों की कहानी नहीं सुनायी, पर आज मेरा धैर्य अपनी मर्यादा को लाँघ चुका है। रो-रोकर हृदय फटा जा रहा है। तुम ही बताओ, क्या सचमुच ही मेरे बच्चे कुलियों की तरह मैले-कुचैले होकर, गलियों की खाक छानते फिरेंगे और हम पति-पत्नी अंधे बैलों की तरह मिल में काम करेंगे?

बच्चों के पास जूते नहीं, कपड़े नहीं। वे पढ़ने नहीं जाते। स्थिति दिन-पर-दिन बुरी होती जा रही है। चार दिन से अनाज के डिब्बे खाली पड़े हैं। मेरी दो देवरानियों की स्थिति तो मुझसे भी बदतर है।

बताओ, क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ?

तुम्हारी दुखियारी बहन,
शील ।

चन्दन के लिए ऐसे दुःख-दर्द सुनना कोई नयी बात न थी । वह मुस्कुराकर बोला—तब तुम्हें शीलवंती ने ही संसार की याद दिलायी है !

रेखा उठ खड़ी हुई—बस, बस । मुझे और कुछ नहीं सुनना !

क्षण-भर के लिए तो चन्दन गम्भीर हो गया । फिर मुस्कुराकर बोला—अच्छा !

रेखा दूसरे कमरे में चली गयी । चन्दन पुस्तकों की आलमारी की ओर बढ़ गया ।

सारी रात तूफ़ान आता रहा ।

रह-रहकर वर्षा का प्रबल झोंका आता था और थोड़ी देर के बाद शांति छा जाती थी । दीवारों से टपकती हुई वर्षा की बूँदें पानी के गढ़ों में गिर रही थीं । सारी रात रेखा सिसकती रही । कभी आँख लग जाती थी, तो वह अनोखे-अनोखे स्वप्न देखने लग जाती थी । कभी वह बड़े-बड़े पहाड़ देखती, तो कभी आग की चिंगा-रियाँ । कभी देखती कि प्रबल वायु वर्षा की बूँदों को तीव्र गति से उड़ाये जा रही है । जब कभी वह जाग पड़ती, तो खिड़कियों की आवाज़ से उसका हृदय काँप उठता था । उसकी अंतरात्मा एक ही प्रश्न पूछ रही थी, जो बातें चन्दन समझ सकता है, हीरा समझ सकता है, शील का गलियों में फेरी करनेवाला पति समझ सकता है, वे मेरी समझ में क्यों नहीं आतीं ! आँख लगने पर, शीलवंती को कहते सुनती, स्थिति दिन पर-दिन बुरी होती जा रही है...चार दिन से अनाज के डिब्बे खाली पड़े हैं....

आँख खुलने पर गोप की टूटी हुई छतरी दिखायी पड़ती थी....

*

सुबह हुई कि रेखा नित्य-प्रति के कामों से निवृत होकर, चन्दन की पुस्तकें देखने लगी । इतने दिन वह जिन पुस्तकों को कूड़ा समझे बैठी थी, उन्हीं को चाव से पढ़ने लगी ।

चन्दन नहा-धोकर कमरे में आया । उसके बालों में से पानी की बूँदें गिर रही थीं । उनको पोंछते हुए वह बोला—पुस्तकों की पूजा हो रही है, या अभ्यास ?

रेखा अपने हाथवाली पुस्तक आलमारी में रखकर, अपने आँचल से आल-मारी की धूल उड़ाती हुई चली गयी । चन्दन उसको तिरछी निगाहों से देखते हुए, मुस्कुराकर, अपने बालों को पोंछने में लग गया । मिल में जाने से पहले वह रेखा से बोला—आज चार बजे मेरे मित्र आयँगे ।

—मुझे मालूम है, पर होंगे कितने ? उतनी व्यवस्था....

रेखा के पिता भी कभी-कभी ऐसा ही कहते थे, तो रेखा की माँ घर में सारे दिन व्यस्त रहती थी। रेखा देखती थी कि महफ़िल में किस तरह गोश्त, कबाब, ब्रान्डी, सोडा और सिगरेटों का दौर शुरू हो जाता था....

चन्दन बोला—ज्यादा दिखावा करने की कोई आवश्यकता नहीं। बारह-चौदह कप चाय बना दोगी, तो बस होगा।

—मैं उनका अच्छी तरह स्वागत् करूँगी। मेहमान रोज-रोज थोड़े ही आते हैं।

—बस-बस ! ज्यादा स्वागत् की कोई आवश्कता नहीं। तुम स्त्रियाँ कभी अपनी वास्तविक स्थिति को देखकर चलना सीख ही नहीं सकतीं !

रेखा चिढ़ गयी।

इतने में गोप स्कूल की पुस्तकें ले, मुँह फुलाये उसके सामने खड़ा हो गया। भाभी और भाई की ओर देखता हुआ बोला—मुझे चार कापियाँ चाहिएँ। मैंने पतंगें बनाकर बेचीं, तो दो कापियों के पैसे तो निकल आये, अभी दो के और चाहिएँ।

रेखा ने उसे पैसे तो दिये, पर घर के खर्चे के लिए बचे हुए पैसे देखकर उसने मन-ही-मन निश्चय किया कि अब कोई-न-कोई मार्ग ढूँढ निकालना ही होगा। अन्यथा थोड़े ही दिनों में यह घर रसातल में जा पहुँचेगा !

(११)

दूसरे दिन स्कूल में हीरे के लिए समय काटना कठिन हो गया। वह बेचैन हो-हो उठता। रह-रहकर रेखा की करुण दृष्टि उससे पूछ रही थी, दुनिया में यह क्या हो रहा है, हीरे ? एक-दो को छोड़कर सभी रिश्तेदार क्यों गिरते जा रहे हैं ?

छुट्टी की घंटी बजने पर वह घर न जाकर, रेखा के पास पहुँचा। बोला—किसकी चिट्ठी थी, भाभी ?

—शीलवंती की। पर केवल शीलवंती ही तो नहीं है। मैं तो देख रही हूँ, कई खाते-पीते घर भी चौपट होते जा रहे हैं। उस दिन मेरी फूफी की देवरानी आयी थी। जयपुर से लौट रही थी। उसने बताया कि वहाँ भी लोगों का ऐसा ही बुरा हाल है। किन्हीं के लाड़ले पुत्र बोझ ढो रहे हैं, तो किन्हीं के मिठाइयाँ बेच रहे हैं और कोई कुली बने खड़े हैं। बस, यही बम्बई की-सी स्थिति है। यहाँ भी अच्छे-अच्छे घरानों की स्त्रियाँ पापड़ और चप्पलें बेच रही हैं। कुलीन घरों के लड़के गुब्बारे और टिकियाँ बेचते हैं।

—रेखा भाभी,—हीरे अच्छी तरह से आरामकुर्सी पर बैठते हुए बोला—पैसा इस समय पैसे से ही पैदा होता है। धनवानों का धन बढ़ता जा रहा है और गरीबों के पास तो कुछ है ही नहीं। वे अपना श्रम बेचकर रूखी-सूखी खा रहे हैं। बुरा हाल मध्यम वर्ग का है, जिनकी रही-सही पूँजी भी समाप्त होती जा रही है! अंत में परिणाम यह होगा कि यह वर्ग भी निम्न वर्ग में मिल जायगा।

रेखा ने दुख-भरे स्वर में पूछा—तो इसका मतलब है, मेरा बहनोई सच ही कहता है। उन्हें मिल में ही काम करना होगा।

—श्रम ही निम्न वर्ग को जीवित रखता है, अन्यथा वे जठरानल में जल मरें।....

रेखा ने शीघ्रता से साँस लेते हुए कहा—बस-बस! और अधिक कड़ुवी बातें मत करो।

हीरे उसे सहमी हुई देखकर चुप हो रहा। मन में बोला, बेचारी लाड़-प्यार में पली कोमल कलिका! प्रकट में बोला—जिस यथार्थ ने मनुष्य का जीवन इतना विषमय कर दिया है, उसको सुनने में भी तुम हिचकिचा रही हो?

रेखा भरी हुई आँखों से हीरे की ओर देखती रह गयी। हीरे ने समझाने के ढंग से कहा—केवल हम सिन्धी ही नहीं, मराठों, बंगालियों और गुजरातियों....सभी की यही स्थिति है। जिनके पास पूँजी है, उत्पादन के साधन अर्थात् खेत-कारखाने खरीदने की शक्ति है, उनका धन दिन-दुगुना-रात-चौगुना बढ़ता है। परन्तु जिनके पास इतना धन नहीं, वे चाहे कितना भी प्रयत्न क,रें कितना भी धनवानों का-सा आडम्बर दिखायें, परन्तु बढ़ती हुई बेकारी और मंहगाई के कारण उनकी आर्थिक स्थिति डावाँडोल हो ही जाती है।

—पर ऐसा होता क्यों है?

—उत्पादन का ढंग ही ऐसा है। जो वस्तु कारखाने में मनुष्यों के समूह-द्वारा पैदा होती है, उसकी बिक्री होने पर प्राप्त लाभ सबमें ठीक ढंग से विभाजित होने की जगह, एक-दो या कुछ ही मनुष्यों की जेब में सुरक्षित रहता है। वे सदैव यही प्रयत्न करते हैं कि किस प्रकार श्रमिकों को थोड़े-से-थोड़ा पारिश्रमिक देकर अधिक-से-अधिक काम लिया जाय और उत्पादित वस्तुएँ महँगी बेची जायँ। उन्हें इस बात की कोई चिंता नहीं कि लोग बेकार, भूखे और वस्त्रहीन रहते हैं। तुम जानती हो कि अमेरिका के पूँजीपति वस्तुओं के ढेर जनता को देने की बजाय समुद्र में डुबोना अथवा जला देना श्रेयस्कर समझते हैं। इस समय वे युद्ध का भूत दिखाकर तत्सम्बन्धी उचित वातावरण तैयार करना चाहते हैं। साधारण उत्पादन के कारखानों में युद्ध-सामग्री का निर्माण हो रहा है।

रेखा निराश हो गयी। वह बोली—ऐसे ढंग का कोई अंत भी है, या कभी यह संसार रौरव नरक बन जायगा ?

हीरे ने कहा—मनुष्य की आत्मा मरी हुई नहीं है। वह थोड़े समय के लिए अत्याचार सह सकता है, पर ऐसा सदैव के लिए नहीं रहेगा। भूख वह अग्नि है, जो मनुष्य को कभी निश्चिंत नहीं रहने देती। आज निडर व शक्तिशाली श्रमिक वर्ग जाग उठा है और वह एक ऐसी आग जला रहा है, जिसकी ज्वाला में सारी विषमता नष्ट हो जायगी।

रेखा को हीरे की बातों में एक गतिशील युग की झलक दिखायी दी। वह काफ़ी देर तक शांत रही। हीरे, अब काफी देर हो चुकी है, कहकर चला गया।

सन्ध्या के चार बजे का समय था। चन्दन के सभी मित्र ठीक समय पर आ पहुँचे। रेखा ने सोचा, समय के इतने मुस्तैद शायद सभी इकट्ठे रहते हों, पर वेश-भूषा से कोई महाराष्ट्री लग रहा था, कोई गुजराती और कोई मद्रासी। वह कौन-सी बात है, जो इन विभिन्न जाति के लोगों को इकट्ठा कर रही है !

इस जिज्ञासा के साथ रेखा जब चाय के प्याले लेकर कमरे में प्रविष्ट हुई, तो उसने एक को कहते सुना, सिवाय कुछ क्लर्कों के सभी कामगार हड़ताल में भाग लेंगे। चूँकि हम-सब अपने अधिकार के लिए लड़ते हैं, अस्तु अधिकार पाने के लिए यह संघर्ष की भावना ही हमें एकत्र करती है।

दूसरी बार जब वह भीतर गयी, तो कोई कह रहा था, गत वर्ष मिल को इतना लाभ हुआ, फिर भी हमें बोनस नहीं मिला। सारा-का-सारा मुनाफा शेयर होल्डरों में बँट गया। मिल के डाइरेक्टर, मैनेजर और अफ़सर लंबी लबी तन्खाहें लेकर चैन की वंशी बजाते रहे, पर हमें पेट भरने तक को प्रर्याप्त वेतन नहीं मिलता। हमें हड़ताल करनी ही चाहिए।

तीसरी बार कोई कह रहा था, हमारे लिए हड़ताल के सिवा और कोई चारा नहीं। हड़ताल के बिना मालिक हमारी माँगें कभी स्वीकार नहीं करेंगे। हड़ताल एक ऐसा साधन है, जिससे उन्हें भय होता है, क्योंकि हड़ताल के कारण उनका मुनाफा रुक जाता है। हम कामगारों की स्थिति वैसे ही कौन-सी अच्छी है, जो बाद में बुरी हो जायगी ?

रेखा जब बाहर निकली, तो उसके हृदय में प्रश्न उठा, वे निडर और वीर मनुष्य ये ही हैं, जो सारी विषमता का नाश करेंगे !

(१२)

मानसूनी वर्षा अपने वेग के साथ आरम्भ हो चुकी थी।

रेखा गाड़ी से उतरकर माटुंगा स्टेशन के शेड में खड़ी होकर फर्श को उन्मत्त दृष्टि से देख रही थी। वर्षा की बूँदें तेज़ी से वृत्ताकार लहरें बनाती हुई नष्ट होती जा रही थीं। कुछ बूँदें पानी के बुदबुदे बना रही थीं, जो एक क्षण के बाद पानी में मिल जाते थे।

वर्षा के वेग के साथ रेखा अपने छोटे-से घर और संसार के महत्वपूर्ण भाग पर, जिसमें उसके-से कई घर सम्मिलित थे, सोच रही थी। रेखा को एक छतरी की आवश्यकता थी, जिससे वह वर्षा से अपना बचाव करती हुई घर तक पहुँच सके। उसके घर को आवश्यकता थी रेखा को नौकरी की। ऐसे हज़ारों घरों की अनेकानेक आवश्यकताएँ थीं। रेखा को लगा कि उसके साथ संसार के कई मनुष्य अपनी आवश्यकताएँ पूरी न कर पाने के कारण वर्षा की बूँदों-द्वारा निर्मित वृत्ताकार लहरों को हसरत-भरी नजरों से देख रहे हैं।

वर्षा थम गयी। रेखा ने घर की राह ली। एँड़ी तक उसके पैर पानी में चल रहे थे, पर वह विचारों में मग्न थी। आज उसके हृदय को असीम विशालता मिल गयी थी। उसे लग रहा था कि वह सारी दुनिया पर छायी हुई है। एक क्षण के लिए उसे स्वयं पर आश्चर्य हुआ कि वह किस प्रकार आज एक अफ़सर को खरी-खरी सुनाकर, अपनी नौकरी को ठुकराकर चली आयी ? इस बात का उसे कोई दुःख न था कि नौकरी नहीं मिली।

उसका हृदय पथरीली सड़क पर बहते हुए पारदर्शक जल की तरह, दुःख से मुक्त होकर, कल्पना के सागर में बहा जा रहा था।

रात को चन्दन के आगे भोजन रखते हुए वह बोली—आज मैं नौकरी ढूँढने गयी थी।

—तुम ?

—हाँ, मैं !

—फिर क्या हुआ ?

—मेरे सामने एक अफ़सर अंग्रेजी में एक मराठे से कह रहा था, सिन्धियों के आने से यहाँ के मूल निवासी और भी बेकार हो गये हैं। इनसे पूछो कि इन्हें पाकिस्तान छोड़ने की क्या आवश्यकता थी ? सभी कहते हैं, हम पाकिस्तान में ऐसे थे, वैसे थे, हमारी वहाँ इतनी दुकानें थीं, इतनी ज़मीन थी ! मैं पूछता हूँ कि इन डरपोकों को यहाँ रहने देकर, मूल निवासियों को बेकार करने से सरकार को क्या मिला है !

चन्दन भोजन का कौर हाथ में लेकर रेखा की ओर देखने लगा।

रेखा बोली—मैं तो समझ गयी, यह संकेत किस ओर है। मैंने कह दिया, पंजाबी शेरों के रक्त से भारतीय इतिहास के पृष्ठ रंगे हुए हैं। हम अगर उनकी दुर्गति देखकर वहाँ बैठे रहते, तो हम भी शरीर सुरक्षित लेकर यहाँ न आते। मेरा विचार है कि अगर आप भी हमारी जगह होते, तो डरपोकों की तरह भाग खड़े होते। हम सिन्धी भारतीय जनता की बेकारी के कारण कदापि नहीं हैं!

इतना कहकर चन्दन का निर्णय सुनने के लिए रेखा चुप हो रही।

चन्दन निश्चिंतता से अपने भोजन में मगन रहा। भोजन कर लेने पर, आँगन में उगी हुई घास पर मुँह साफ करते हुए वह बोला—फिर क्या कहा अफ़सर ने ?

—बोला, लड़की, तुम यहाँ नौकरी ढूँढने आयी हो, न कि व्याख्यान देने!

चन्दन फिर मौन हो गया।

पर रेखा चुप न रह सकी—यहाँ के लोग हमसे घृणा क्यों करते हैं ? हमने उनका बिगाड़ा ही क्या है ? सिन्धी भी तो परिश्रम करके खाते हैं !

चन्दन ने शांत स्वर में उत्तर दिया—इनका कुछ-न-कुछ तो अवश्य बिगड़ा है। सिंधियों के आने से व्यापार में, नौकरियों में, मार्केट में जहाँ भी उन्होंने हाथ लगाया है, वहाँ यहाँवालों के लाभ में कमी हो गयी है।

—परन्तु इसमें हमारा क्या दोष ? हमें भी तो जीना है ?

—हमारा ढाँचा ही व्यक्तिगत होड़ पर बना हुआ है। जिसकी लाठी, उसकी भैंस। किसी की रोटी छिने, चाहे कोई गिर भी पड़े, पर प्रत्येक कंधा भिड़ाकर आगे बढ़ने का ही प्रयत्न करेगा। स्वार्थपरता ने इनके मनुष्यत्व और भ्रातृत्व पर पर्दा डाल दिया है। हम तो दूर देश से आये हैं, पर यहाँ के मूल निवासी भी आपस में लड़ते हैं। इतना ही नहीं, एक ओर हजारों गुजराती, मराठे और कन्नड़ आदि इमारतों में रहते हैं, विलास प्रधान जीवन बिता रहे हैं, दूसरी ओर उन्ही के भाई फुटपाथों पर दिन काट रहे हैं। उनकी स्थिति शरणार्थियों से भी गयी-बीती है। इस तरह तुम देखोगी कि वास्तव में यह दरिद्रों और धनवानों का संघर्ष है। अतएव हम सिंधियों को यहाँ के गरीब लोगों से मिलकर पूँजीपतियों से टक्कर लेनी होगी। जब तक ऐसी व्यवस्था नहीं होती कि सरकार प्रत्येक नागरिक को अन्न, वस्त्र तथा स्थान देने के लिए उत्तरदायी है, तब तक ये परिस्थितियाँ और ये घृणा की दीवारें अटल रहेंगी।

चन्दन ने देखा, रेखा किसी गहरे विचार में डूबी हुई है, शायद उसका ध्यान इस ओर न हो। यह विचार कर, वह बात बदलने के लिए बोला—अँधेरी में एक सिंधी ने बनियान और स्वीटर बनाने की फैक्टरी खोली है। पचीस तारीख तक आवेदन-पत्र मँगाये हैं। तुम भी एक भेज दो न।

रेखा पर वज्रपात-सा हुआ। उसने हाथ का कौर थाली में रख दिया—मैंने क्या बनियान और स्वीटर बनाने के लिए ही मैट्रिक पास की थी? यह कैसा जीवन है कि काम करना चाहती हूँ, तो कोई अच्छा काम भी नहीं मिलता? मैं कैसे फैक्टरी में जाकर बनियान और स्वीटर बनाऊँगी?

गोप बिस्तर बिछाते हुए बोला—भाभी, अगर कल भी आज-जैसी वर्षा हुई, तो मैं स्कूल नहीं जा सकूँगा। छतरी तो पहले ही पुरानी थी, आज के तूफ़ान ने तो उसका कचूमर ही निकाल दिया है। बड़ी बात तो यह है कि कल स्कूल जाने के लिए कमीज भी नहीं है।

रेखा को लगा कि वह एक नादान बच्ची है, जिसे माँ ने कान पकड़कर चाँटा रसीद कर दिया हो। उसने मन-ही-मन निर्णय कर लिया, कि वह कोई भी नौकरी करेगी, पर गोप को अवश्य पढ़ायगी!

*

पच्चीस तारीख़ में अभी दस दिन पड़े थे। इतने दिन रेखा निष्क्रिय न बैठी रही। एम्प्लायमेन्ट आदि आफ़िसों की खाक छानती रही। पर कहीं नौकरी हो, तब तो रेखा को मिले। नौकरी की जगह, प्रति दिन उसे बेकारों के झुंड दिखायी देते। हृदय में इन पीड़ित मानवों के लिए सहानुभूति रखते हुए, वह सोचने लगी, हज़ारों की संख्या में बेकार फिर रहे हैं, अगर इनकी श्रम-शक्ति का भी उपयोग किया जाता, तो देश कितना उन्नत होता? गाड़ी जब वायु-वेग से चलती, तो दोनों ओर छोटे-छोटे घर और फूस की झोपड़ियाँ देखकर उसकी अंतरात्मा पूछ उठती, क्या ये सभी मरीन ड्राइव और चर्चगेट के रहने-योग्य मकानों में नहीं बदल सकते?

परले और महालक्ष्मी के पास छोटे-छोटे मकान वर्षा के पानी के नीचे डूब गये थे। अखबारों में उनके चित्र देख रेखा एक दिन वहाँ उतर पड़ी। वहाँ का दृश्य देख, रेखा के देवता कूच कर गये। पेड़ों के नीचे धूप में काले-काले मनुष्यों के परिवार, अपनी डूबती हुई झोपड़ियों को सजल नेत्रों से देखते हुए, भोजन बना रहे थे। रेखा का रोम-रोम काँप उठा। उसने सोचा, अगर इस देश के शासक स्वयं भगवान् भी होते, तो वे भी दंड के अधिकारी होते। पर इस सरकार के विरुद्ध लोग विद्रोह तक नहीं करते! अन्धे तथा बहरे होकर हम यह अव्यवस्था चुपचाप देखते और बर्दाश्त करते रहते हैं।

वह रात को चन्दन से कहने लगी—आज जो-कुछ देखकर आयी हूँ, उसने मेरे हृदय में घाव कर दिये हैं। जब मनुष्य तड़प-तड़पकर अपने आशियानों को डूबते हुए देखते हैं, तब इन धनवानों और मंत्रियों की बुद्धि, अपने कर्त्तव्य से आँखें मूँदकर घास चरने चली जाती है क्या?

—और जिसकी मनुष्यता जाग उठती है, वह अपने अधिकारों की रक्षा के लिए स्वयं को समर्पित कर देता है ! फिर उसे यह विचार ही नहीं रहता कि उसे दूसरों के जीवन से क्या लेना-देना, हर एक अपने कर्मों का फल भोगे !

यह सोचकर कि अंतिम वाक्य एक दिन उसी ने चन्दन से कहे थे, रेखा लजा गयी ।

चन्दन रेखा के भाव-भरे मुख को देखकर, हँसते हुए बोला—अभी क्या देखा है, बेचारे कामगारों के जीवन की विषमताओं को और निकट से देखोगी, तो तुम्हें रोना आ जायगा !

*

दूसरे दिन हीरे आया, तो रेखा उससे भी यही बातें करने लगी—हीरे, दरिद्रता की भी कोई सीमा होती है । विज्ञान ने इतनी उन्नति की है, वह क्या केवल साहूकारों के लिए, जिनके पास सुख-ऐश्वर्य के सब साधन मौजूद हैं ! गरीबों के लिए न रहने का ठिकाना, न खाने का ! रहने की झोपड़ियाँ भी गंदी गलियों में ! पहले मैं इनकी आदतों को दोष देती थी, पर अब देखती हूँ कि आदतें भी बाह्य परिस्थितियों से बनती हैं ।

चन्दन बोला—हीरे, अब तुम्हारी भाभी धीरे-धीरे सत्य को परखने-समझने लग गयी है ।

—पर जैसे-जैसे यह सत्य नग्न रूप में मेरे सामने आता जाता है, मैं और भी उदासीन होती जा रही हूँ । जीवन की सरिता को पहाड़ों के आँचल से कलकल निनाद करते बहते, भूमि को शस्य-श्यामला बनाते हुए, समुद्र में मिलने की बजाय, छोटी छोटी नालियों और मरुभूमि में सूखते देखकर, मेरा हृदय पीड़ित हो उठा है।

—रेखा, सत्य-पथ का प्रत्येक पथिक पहले दुःख की आँच में तपता है, लेकिन उसे शांति तब प्राप्त होती है, जब वह जीवन की सरिता को मैदान की ओर मोड़ने के लिए स्वयं कार्य करने लग जाता है ।

रेखा को उन शब्दों में इतनी वास्तविकता दिखी कि वह काफ़ी समय तक चन्दन के मुख की ओर देखती रही । चन्दन के शब्द केवल शब्द न थे, उनके पीछे जीवन का एक अटल सत्य छुपा हुआ था । रेखा ने उसे कभी एक मिनट भी व्यर्थ गँवाते नहीं देखा था ।

रेखा ने अपनी डायरी में लिखा कि, मुझे क्या मालूम कि जिन क्षणों को मैं अपने व्यक्तिगत सुख के लिए प्राप्त करने का दुराग्रह करती थी, उनका अनुष्ठान समाज-कल्याण के, जन-मंगल के लिए हो रहा है ?

आधी रात बीत चुकी थी । रेखा को ऐसा लगा, मानो कोई उसकी चारपाई के पास उसपर झुका हुआ है, उसकी गर्म साँस उसके मुख का स्पर्श कर रही है ।

वह आँखें मलती हुई उठी। बत्ती जलायी, तो देखा, चन्दन अपनी चारपाई पर सोया हुआ था। वह उसके निकट गयी और फिर बत्ती बुझाकर लेट गयी।

वह काफी समय तक सोचती रही, वह चाहे कितना भी छुपाये, पर उसका मुख पसीने की बूँदों से चमक रहा था....अब वे अवश्य उसे अधिक चाहने लगे हैं। फिर अकस्मात उसे लगा, अभी दोनों के बीच में एक दीवार खड़ी है, जिसकी ईंट-ईंट पर लिखा है, यह कैसे होगा ?

यह कैसे होगा ?

(१३)

चन्दन जिस मिल में काम करता था, उसमें हड़ताल आरम्भ हो गयी। पूरे सोलह दिन हो गये थे। पहली तारीख को वेतन मिलता था, पर हड़ताल इक्कीस तारीख से आरम्भ हुई थी। महीने के सात दिन और बीत गये, और वेतन नहीं मिला। पापड़, दूध, दही इत्यादि मँगाना बंद हो गया। अब अनाज-घी और घास-लेट की भी तंगी होने लगी।

रेखा ने झुँझलाकर पति से कहा—इतने कष्ट सहने पर भी कोई फल मिला या नहीं ?

चन्दन ने भृकुटि तानकर कहा—कष्ट ? कष्ट को तो तुम अभी जानती ही नहीं। सच्चा कष्ट तो हमारी मिल के मज़दूर सहन कर रहे हैं। हम क्लर्कों को कष्ट की केवल हवा लगी है। आज हमारी सभा होनेवाली है, चलकर देखो तो कि मजदूरों की बस्ती की क्या अवस्था है !

*

रेखा संध्या को वहाँ गयी। बस्ती को देखकर रेखा सुन्न हो गयी। मुरझाये मुखोंवाली स्त्रियाँ, कमर झुके हुए पुरुष, काले-काले, नंगे-अधनंगे बच्चे....शुष्क और निराश आकृतियाँ, दुबले-पतले, कंकाल-से शरीर....ये-सब देखकर, रेखा का हृदय काँप उठा।

बस्ती के पाखानों के पीछे एक छोटा-सा जंगल था और उसके पीछे एक मैदान। वहाँ कितने ही स्त्री-पुरुष एकत्र हुए थे। पहले एक स्त्री ने गीत गाया, फिर कई लोगों ने व्याख्यान दिये।

रेखा सभा से लौटी, तो उसे ऐसा लगा, मानो आकाश पर छायी हुई बची-खुची घटाएँ भी दूर हो गयी हों, दिन के स्वच्छ तथा निर्मल प्रकाश को पाकर, गलियाँ और खिड़कियाँ....सभी उज्ज्वल हो उठी हों।

एक पतली और लंबी-सी स्त्री ने कहा था, हमें यह कष्ट धैर्य से सहन करना चाहिए। चूँकि हम-सब सत्य के लिए लड़ रहे हैं, हमारी तपस्या व्यर्थ नहीं जायगी। हमारा सत्य सूर्य की तरह प्रकाशमान है! यह वह लड़ाई है, जो सभी पेशे और सभी जातियों के स्त्री-पुरुष मिलकर लड़ रहे हैं। मज़दूर, किसान, धोबी, दर्जी, बढ़ई, ड्राइवर, चपरासी........सभी हमारी सेना के सिपाही हैं। हम गरीब हैं, पर हमें किसी से भीख नहीं चाहिए! हम कुत्ते नहीं हैं, जिन्हें टुकड़ा देकर तृप्त किया जा सके! हम अपने श्रम का उचित पारिश्रमिक चाहते हैं! हम दो हाथों से काम करते हैं, इसलिए कि एक हाथ के फल से अपनी उदर-पूर्ति करें और दूसरे हाथ का फल प्राप्त कर हमारे बच्चे, बूढ़े सभी सुखी जीवन व्यतीत कर सकें। परन्तु हालत यह है कि हमें रूखा-सूखा तक खाने को नहीं मिलता। क्यों? आखिर क्यों?

रेखा नें अच्छी तरह देखा था, उस स्त्री की मुखाकृति चमक रही थी। भूख उसे जला नहीं पायी थी, पर उल्टे वह स्वयं जलकर अपनी ज्वाला उस औरत के मुख पर फैला रही थी! सभावाले गीत की पंक्तियाँ भी उसे अच्छी तरह याद थी:

आज चारों ओर ही हड़ताल है
संकटों की भूमि पर भूचाल है
लड़ रहा मजदूर बाजी हाथ है
जिन्दगी मरती नहीं, विश्वास है....

*

दूसरे दिन सभा से लौटते समय चन्दन को देर हो गयी। चन्दन कपड़े बदलकर आ बैठा, तो कुर्सी के पीछे खड़ी हो, आँचल का छोर अँगुली में लपेटते हुए, रेखा बोली—एक खुशखबरी सुनाऊँ?

—सुनाओ, कौन-सी खुशखबरी है, जिसने तुम्हें इतना प्रसन्न कर दिया है! —चन्दन रेखा की ओर देखता हुआ बोला।

रेखा थोड़ी देर चुप रही। उसे शब्द ही नहीं मिल रहे थे कि वह अपने हृदय की बात व्यक्त कर सके। पर चन्दन को अपनी ओर निहारता देख बोली—मुझे उस अँधेरीवाली फैक्टरी में नब्बे रुपये मासिक की नौकरी मिल गयी है!

चन्दन ने शीघ्र निकट आकर, रेखा की ठुड्डी ऊपर उठाते हुए कहा—सच?

रेखा ने आँखें ऊपर उठाकर कहा—सच!

चन्दन को अत्यन्त प्रसन्न देखकर उसका मन गद्‌गद हो उठा। वह दूसरे कमरे में भाग गयी और बार-बार अपनी ठोड़ी ज़ोर-ज़ोर से पोंछने लगी।

दूसरे दिन रेखा फैक्टरी से लौटी, तो चन्दन आँगन में चक्कर लगा रहा था। रेखा ने उसे न-देखा-सा कर दिया। वह सीधे दूसरे कमरे में चली गयी। भीतर हीरे और गोप गणित के किसी प्रश्न को हल करने में लगे हुए थे। वह आरामकुर्सी पर

लेट गयी। जब हीरे प्रश्न हल कर चुका, तो रेखा बोली—हीरे, मैं कल से नौकरी करने लग गयी हूँ।

उसके होंठों पर गर्व की झलक देखकर, हीरे को लगा, जिस पौधे को वह इतने दिन पानी देता रहा, वह आज फूलों से लहलहा रहा है!

रेखा बोली—पर स्त्री नौकरी करे, तो इसमें पुरुष के लिए गौरव की क्या बात है?

हीरे बोला—गौरव क्यों नहीं? एक स्त्री अपने पैरों पर खड़ी हो सके, इससे अच्छी क्या बात हो सकती है? हमारा यह विचार है कि जब तक स्त्री को आर्थिक स्वतंत्रता नहीं मिलती, तब तक वह पूर्ण रूप से उन्नति नहीं कर सकती और जब तक वह उन्नति की ओर उन्मुख नहीं होती, तब तक वह सच्ची जीवन-साथिन नहीं हो सकती।

रेखा एक क्षण के लिए सोच में पड़ गयी। फिर अल्हड़ बालक की तरह बोली—ये उत्तर मुझे क्यों नहीं सूझते?

हीरे हँस पड़ा—हर मार्ग के पथिक को अभ्यास करना पड़ता है। जिस मार्ग की तुम पथिक हो, उसके लिए अभ्यास की जरूरत है या नहीं?

इतने में राधा आ पहुँची। कहने लगी—रेखा, बैठी हो? तीन बार तुम्हारे लिए पूछ गयी हूँ! तुम्हारे बिना तो पड़ोस ही सूना हो जाता है! पर यह तो बताओ, जिस मिल में तुम्हारा पति काम करता है, उसकी हड़ताल समाप्त हुई, या नहीं?

रेखा ने कुर्सी पर लेटे ही उत्तर दिया—आज तो अखबार में पढ़ा था कि बम्बई की और कई मिलों ने भी सहानुभूति दिखाने के लिए, एक दिन की हड़ताल करने का निश्चय किया है।

राधा आँखें फाड़ती बोली—इतनी मिलें बंद रहेंगी, तो क्या कपड़ा महंगा न होगा? इससे तो देश का बड़ा अहित होगा। मजदूरों को भी देश का खयाल रखना चाहिए या उन्हें अपने वेतन की ही लगी पड़ी है।

रेखा ने हँसते हुए कहा—दीदी, अब तो तुम बड़ी देश-भक्तिन बन गयी हो! मुझे इस बात का उत्तर दो कि क्या मजदूरों ने ही देश-भक्ति का ठेका ले रखा है? क्या सरकार और साहूकार अशिक्षित अथवा अक्ल के दिवालिये हैं, जो उन्हें देश की आय का खयाल नहीं रहता? इतनी मिलें बंद रहने के कारण जो हानि होती है, मिल-मालिक उसे सहने के लिए तैयार हैं, पर पसीना बहानेवाले मजदूरों को पेट भरने के लिए भी वेतन नहीं दे सकते?

राधा पहले ही निरुत्तर हो गयी, पर योंही हार मानने के लिए वह तैयार न थी। बोली—रेखा, जिस मनुष्य को ईश्वर जिस श्रेणी में पैदा करता है, उसे उसी श्रेणी में रहकर संतोष करना चाहिए।

ऐसी बातों के सिलसिले में, पहले रेखा चुप रह जाया करती थी, पर अब उसका हौसला बढ़ा हुआ था। उसकी अंतरात्मा इतनी विशाल हो गयी थी कि प्रत्येक मनुष्य की आशाएँ व इच्छाएँ उसके शरीर का अंग बन गयी थीं। बोली—दीदी, हम कितने नीच हो गये हैं! दूसरों में और अपने में कितना अन्तर समझते हैं! क्या गरीबों और कामगारों में हमारे-जैसे ही प्राण नहीं हैं? ईश्वर को अपना पिता कहते लज्जा नहीं आती, जब हम एक-दूसरे को भाई-भाई नहीं समझते? हम उनके दुःखों को पशुओं की तरह निर्मम होकर देखते हैं। क्या यह मनुष्यता के माथे पर कलंक नहीं?—कहते-कहते, रेखा की आँखें आँसुओं से भर गयीं।

राधा ने कहा—बहू, तुम्हारी इन्हीं बातों ने तो मोह रखा है! चाहती हूँ, जो समय मंदिर में जाकर बिताती हूँ, वह तुम्हारे पास बैठकर बिताऊँ, तो अच्छा!

चन्दन ने भीतर से ही सब-कुछ सुन लिया। वह मन में बोला, जब फूल में सुन्दरता और सुगंधि दोनों होती हैं, तो वह कितना प्यारा लगता है!

वह लंबी साँस लेकर आकाश की ओर देखने लगा।

हीरे राधा और रेखा को छोड़कर चन्दन के पास जा पहुँचा—क्यों, जी, आज गगन से लगन लग गयी क्या?

चन्दन हीरे की बाह पकड़कर, मुस्कुराते हुए, दूसरे कमरे में लिवा ले गया। काफी देर तक दोनों बातों में मशगूल रहे।

रेखा वहाँ आयी, तो बोली—हमने पड़ोस में गीत सिखाने का एक वर्ग चालू किया है। मेरा विचार है, वहाँ वे ही गीत सिखाये जायँ, जिनमें नयी उमंग और विचार हों, जो साधारण गीतों की तरह सुला न दें, बल्कि जागरण की भावना पैदा करें!

चन्दन बोला—तुम्हारे-जैसे ही साहसी और लगनशील लोगों की एक संस्था, इंडियन पीपुल्स थिएटर्स एशोसिएशन, बम्बई में काम करती है। उनके गीतों, नृत्यों और नाटकों में कला-द्वारा मानवता की सेवा करने का संदेश है। कल चलोगी?

हीरे सोचता रह गया, यह चहारदीवारी से बाहर निकली और खूब निकली!

(१४)

—रेखा बहन, उठकर दिया तो जलाओ, ऐसे अँधेरे में भी पुस्तक मुँह पर रखे बैठी हो?

रेखा ने उठकर बत्ती जलायी और कहा—दीदी, आज तो मुझे बत्ती का प्रकाश भी धुँधला लग रहा है!

राधा वहीं आँचल गले में डाले संध्या करने लग गयी। रेखा निष्प्रयोजन मँडराते हुए पतंगों को देखने लगी। उसकी आँखों के सामने सुबहवाली घटना नाच रही थी। वह नौकरी पर जाने के लिए तैयार थी। रूमाल बटुए में डालते समय उसने अनुभव किया, किसी की दो आँखें उसके गोरे गोरे हाथों को देख रही हैं। उस दृष्टि ने मानो उसे कोई भूली हुई बात याद दिला दी।

उसने आँखें ऊपर उठायी ही थीं कि बाहर से आवाज़ आयी थी—मिस्टर चन्दन!

दो लंबे-लंबे सिपाही अन्दर प्रविष्ट हुए—मिस्टर चन्दन, नसरवानजी मिल की कामगार युनियन के ज्वाइंट सेक्रेटरी, आपको कानून के खिलाफ़ हड़ताल कराने और मजदूरों को भड़काने के अपराध में गिरफ्तार किया जाता है।

पास-पड़ोस के सभी लोग आकर इकट्ठा हो गये। रेखा कुछ घबरायी, पर चन्दन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। सिपाहियों ने घर की तलाशी ली। आलमारी से पुस्तकें निकालकर कमरे में ढेर लगा दिया।

गोप दुखित होकर रेखा से बोला—भाभी, जिन पुस्तकों को भैया प्राणों की तरह सँभालकर रखते हैं, उनको उन्होंने कितनी हैवानियत के साथ फेंक दिया है!

राधा सीधे सिपाहियों के सामने जाकर कहने लगी—तुम लोग उनको क्यों पकड़ते हो? यह आदमी सच्चे हैं, किसी की चोरी करना इनका काम नहीं है!

चन्दन ने जाते समय एक ऐसी प्यार-भरी दृष्टि से रेखा की ओर देखा था, जिसे वह अब तक आँखों में सँजोये बत्ती की ओर देख रही थी। राधा ने सन्ध्या समाप्त करके कहा—तुम क्यों चिन्तित होने लगीं? तुम्हारा पति तो अपने अधिकारों के लिए लड़ते हुए जेल गया है, कोई चोरी थोड़े की है? आजकल तो छोटे-छोटे बच्चे, जो फुग्गे और मिठाइयाँ बेचते हैं, दो-दो दिन जेल में रहकर आते हैं। देखना, मेरा संध्या का स्वामी कैसे दूध का दूध और पानी का पानी करता है!

रेखा ने कहा—दीदी, तुम तो जैसे मेरी बहन शीलवंती हो। मुझे उनके जेल जाने का तनिक भी दुःख नहीं है। पर न जाने क्यों, उनके बिना यह घर सूना-सूना-सा लगता है। हवा भी जैसे अन्दर आते झिझक रही है।

—कभी अकेले नहीं रही हो, इसलिए। आज मैं तुम्हारे यहाँ ही आकर सोऊँगी।—राधा धैर्य दिलाकर बाहर निकली ही थी कि गुलाब राय पत्नी व माँ के साथ आ पहुँचा।

—मैं तो पहले ही कहता था कि वह दूसरों के लिए मरना छोड़ दे। चोर ही संसार के अधिपति बने बैठे हैं। अगर हमें भी सुख से जीना है, तो चोर ही बनना पड़ेगा। पर वह तो मुझे ही दोष देता था। अगर उसे अपना ख़याल नहीं, तो अपनी रूपरानी का तो ख़याल करता।—कहकर गुलाब राय ने तिरछी निगाहों से रेखा

की ओर देखा।

रेखा का हृदय घृणा से भर उठा।

—ऐसे पति के साथ तो पत्नी भी रही!—गुलाब राय बोला।

—यह बात तो नहीं है,—रेखा ने उत्तर दिया।

देवी ने कुछ नहीं सुना, वह अपनी चमकती हुई साड़ी को ही ठीक करने में लगी थी। माँ बोलीं—बेचारा जेल में कैसे दिन काटेगा!—फिर आँचल में गाँठ बाँधकर बोलीं—गुरु महाराज! मेरे बच्चे का बंधन काट दें। प्रसाद चढ़ाऊँगी! सच कहते हैं, माँ बच्चों को जनम तो देती है, पर उनके भाग्य की साथिन नहीं!—गुलाब से बोलीं—अब किसी-न-किसी तरह मेरे चन्दन को ला दो!....

रेखा बीच में ही बोली—माँजी, अधिक दिन तो जेल में रहेंगे नहीं। दूसरी मिलों ने भी सहानुभूति दिखाने के लिए हड़ताल की है। मजदूरों की एकता के आगे मालिकों को झुकना ही पड़ेगा।

जब सभी चले गये, तो गोप बोला—भाभी, दुःख तो इन्हें ज़रा भी नहीं हुआ, बस दिखावा कर रहे थे!

रेखा ने गोप के सर पर हाथ फेरते हुए कहा—तुम नहीं चाहते कि तुम्हारे पास भी सुन्दर-सुन्दर कपड़े हों?

गोप ने कहा—बढ़िया कपड़े पहनाना कौन नहीं चाहता? पर और भी हज़ारों लोग ऐसे हैं, जो मुझसे भी बुरे कपड़े पहनते हैं। तो क्या कपड़ों के लालच में तुम्हें छोड़कर चला जाऊँ?—रेखा को अपनी ओर ममता-भरी दृष्टि से देखते पाकर, वह फिर बोला—भाभी, तुम क्या मुझे दसवीं कक्षा का बच्चा ही समझती हो? तुम्हारे लिए तो शायद मैं कभी भी बड़ा नहीं हो पाऊँगा, जो अच्छे-बुरे का निर्णय कर सकूँ।

रेखा उछल पड़ी! बोली,—बड़े क्यों नहीं होगे? तुम पर ही तो मेरी आशाएँ केन्द्रित हैं!—फिर प्रसन्न चित्त होकर अपने काम में जुट गयी।

रात को रेखा पुस्तक लेकर आरामकुर्सी पर जा लेटी। वह विचार करने लगी, उनके जेल जाने से थोड़े दिन पहले मेरे जीवन में एक अजीब मधुरता-सी पैदा होने लगी थी। कई बार उन्होंने बड़े प्यार-भरी नजरों से मुझे देखा था। एक बार नज़र मिलते ही, मानो उनके नेत्र आकुल होकर पूछ रहे थे, अब भी हम इतनी दूर-दूर क्यों? लेकिन मेरा हृदय एकाएक कह उठा था, बस, इतने में ही ढुलक गयी?

वह शीघ्र ही उठ खड़ी हुई। उसने अपने सर को इतने ज़ोर से झकझोरा कि अगर उसपर रूई के जर्रे भी होते, तो गिर पड़ते। फिर पुस्तक पढ़ने लगी।

राधा ने कहा—आज तो तुम्हारी आँख ही नहीं लग रही। शायद पति से कभी अलग नहीं हुई हो। सारी रात नींद नहीं आयगी क्या?

—और, दीदी, तुम भी तो मेरे पास सोओगी! तब तो तुम्हें भी नींद नहीं आयगी!—रेखा हँस पड़ी।

—ना-ना, मैंने तो सर तकिए पर रखा नहीं कि नींद आयी! हाँ, उन्हें ज़रा देरी से नींद आती है।—कहते-कहते राधा शरमा गयी।

रेखा ने अपना मुँह पुस्तक की ओर मोड़ लिया।

उसकी अँगुलियाँ पुस्तक के पृष्ठों पर फिरते-फिरते धमनियों में दर्द-सा पैदा करने लगीं।

(१५)

अंगीठी से अंगारों की लाल लाल लपटें निकल रही थीं। चन्दन भोजन की प्रतीक्षा करता हुआ अंगीठी पर हाथ सेंक रहा था। अभी शीत ऋतु आरम्भ तो नहीं हुई थी, पर वर्षा के अंतिम दिनों के बाद जाड़ा-सा लगने लगा था। चन्दन पूरे सप्ताह के बाद जेल से मुक्त हुआ था। वह बहुत प्रसन्न था। हड़ताल सफलता के साथ समाप्त हुई थी। मजदूरों की प्रमुख माँगें, वेतन, बोनस, भत्ते आदि में बढ़ौती स्वीकार कर ली गयी थी।

रेखा ने भोजन की थाली लाकर आगे रखी, तो चन्दन को जेल की मोटी रोटियाँ याद आ गयीं। साथ ही उस काल कोठरी की स्मृतियाँ भी जाग उठीं। उन स्मृतियों के क्षितिज पर एक बार लंबी लंबी अँगुलियोंवाली कोमलांगना भी आयी थी। चन्दन ने पूछा था, तुम कौन हो? उसने गगन के नील पट पर लिखा, अपने पाँवों पर खड़ी हुई स्त्री! रात के समय वह सुन्दरी अपनी कोमल कमर झुकाये पुस्तकों पर पुतलियाँ नचा रही थी। चन्दन ने पूछा था, तुम कौन? उसने रजनी के कृष्ण आँचल पर लिखा, विद्या और प्रकाश की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करती नारी!

प्रभात की स्वर्णिम किरणें जब जेल की खिड़कियों से अन्दर आयीं, तो चन्दन की रूप रानी ने अपनी बड़ी-बड़ी पलकें उठाकर अपने मद-भरे नैन दिखाये थे। चन्दन ने पूछा था, तुम कौन? उसने उषा के गुलाबी गालों पर लिखा, अपनी जीवन-ज्योति से स्वजाति में जागृति लानेवाली नारी! उस समय चन्दन ने उस चंद्रमुखी की छाया प्रतिमा को चूमकर वचन दिया था, कि मुक्त होकर उसे बाँहों में ले कहेगा, अब दूर नहीं रह सकेंगे, मेरी रानी!

रेखा पानी का गिलास लेकर खड़ी हुई थी। बोली—यह क्या, अभी तक एक कौर भी नहीं लिया ?

चन्दन अपनी स्वप्न रेखा को यथार्थ में देखकर हँस पड़ा और फिर सर झुकाकर भोजन करने लग गया।

रेखा भी अपने को रोक न सकी। साड़ी के छोर से होंठों पर नाचती हुई मुस्कुराहट को छुपाती चौके में चली गयी।

चन्दन भोजन समाप्त कर, थाली उठा, चौके की ओर चला। गोप और रेखा को वार्तालाप करते देख वह रुक गया। रेखा तवे पर से रोटी उतारने में लगी हुई थी और गोप कह रहा था—भाभी, तुमने जो यहाँ संगीत-कक्षा खोली है और उसमें जो गीत सिखाये हैं, वे लोगों को बहुत पसन्द आये हैं। पड़ोस के सभी घरों में वे गीत गूँज रहे हैं। हम एक छोटा-सा उत्सव करनेवाले हैं, तुम ऐसे कुछ नये गीत मुझे सिखा दोगी ?

रेखा बोली—क्यों नहीं।

चन्दन ने सब-कुछ सुना। मन-ही-मन बोला, स्त्री उचित मार्ग पर आती देर से है, पर जब आ जाती है, तो बड़ी तीव्र गति से चलती है। वह चौके में थाली रखकर बोला—आज मैं जल्दी सोऊँगा, इसलिए मेरे लिए दूध जल्दी ही मेज पर रख देना।

रेखा बोली—अच्छा।

—तुम कितने बजे सोओगी ?

—मैं तो आज बारह से पहले सो न सकूँगी।

—क्यों ?

—कल स्त्री-मंडल में, नये समाज में स्त्री का स्थान, विषय पर वाद विवाद है। कुछ तैयारी करनी है।

चन्दन जाकर अपनी मेज पर पत्रों के पृष्ठ पलटने लगा, रेखा भी कार्य-मुक्त होकर चारपाई पर जा बैठी।

पड़ोस के घड़ियाल ने दस बजाये। चन्दन उठकर अपनी चारपाई पर जा बैठा। रेखा जँभाई लेकर उठ खड़ी हुई। गोप का लिहाफ़ ठीक कर, चन्दन के लिए दूध लाकर उसने मेज़ पर रख दिया। प्रकाश में निंदासी रेखा को चन्दन मुग्ध होकर देख रहा था। रेखा को लगा, उसकी सुन्दरता को आँखों में ही पी जानेवाली दृष्टि उसकी मुखाकृति पर जमी हुई है। उसने अनुभव किया कि उसके पाँव विचलित हो रहे हैं।

तभी किवाड़ खटखटाने की आवाज़ हुई। दोनों चौंक उठे। इस समय कौन होगा ? रेखा ने धड़कते हुए दिल से पूछा—कौन ?

बाहर कई आदमियों की आहट थी, पर एक क्षीण-सी आवाज़ आयी—भाभी, मैं हूँ।

रेखा उछल पड़ी। किवाड़ खोलकर उसने सुन्दर को छाती से लगा लिया। गुलाब की माँ चीखती हुई अंदर प्रविष्ट हुई—पुत्र! सत्यानास हो गया! देखो तो सही, भैया का क्या हाल हो गया है! रेखा बिटिया, गुलाब के लिए बिस्तर तो बिछा! तुम्हें क्या बताऊँ, पुत्र, मेरा तो कलेजा ही फट गया है!

माँ को हाँफते देख चन्दन पानी का गिलास भर लाया। उसकी भाव-चेष्टा में कोई परिवर्तन नहीं आया, पर रेखा के तो जैसे हाथ-पैर ही ठंडे हो गये। कठिनाई से एक चारपाई पर बिस्तर बिछाकर वह सास के निकट आ खड़ी हुई। गुलाब देवी का आधार लेकर धीरे-धीरे बिस्तरा की ओर बढ़ने लगा।

रेखा जेठ को देखकर चकित रह गयी। इतना स्वस्थ गुलाब इतना निर्बल हो गया है कि बिना किसी का आधार लिये बिस्तर तक भी नहीं जा सकता।

उसके पीले-पीले हाथ और आग में झुलसी आकृति देखकर रेखा की आँखों में आँसू भर आये। थोड़े समय के लिए कमरे में शांति छा गयी। गुलाब राय बिस्तर पर बैठकर हिचक-हिचककर बोला—चन्दन, कल ही ज़ब्ती का आर्डर निकलेगा। मेरे कोलाबेवाले घर का सारा सामान कोर्ट में पहुँच जायगा, फिर नीलाम....—वह अधिक न बोल सका। फिर पानी के लिए संकेत कर बिस्तर पर लेट गया।

देवी भी आँसू बहाती बोली—दादा एक ही चोट से भिखारी बन गये!

माँ आँखें पोंछते हुए बोलीं—चन्दन, रेशम के उतार-चढ़ाव में मेरा गुलाब पिस गया है। गुरु महाराज इसकी आयु लंबी करें! ऐसी अवस्था में तुम्हारे यहाँ न लाकर, और कहाँ ले जाती? पाँच दिनों से बेचारे ने दौड़-धूप की है। आज संध्या तक सेठ-साहूकारों की खाक छानता रहा, पर जब कुछ फल न निकला, तो आकर औंधे मुँह बिस्तर पर गिर पड़ा। अब तो क्षण-क्षण के बाद उठता है और पानी माँगता है।

उसके बाद काफ़ी देर तक सन्नाटा रहा। गुलाब को सोया हुआ जानकर माँ बोलीं—जाओ, तुम सभी आराम करो। मैं जागती हूँ।

आधी रात को जब चन्दन की आँख खुली, तो माँ किवाड़ खटखटाकर कह रही थीं—चन्दन बेटा, जल्दी उठके आना! मेरा तो कलेजा बैठा जा रहा है!

चन्दन भाई के पास आ बैठा। देवी और गुलाब दोनों खिन्न दिख रहे थे। गुलाब के माथे पर पसीने की बूँदें झलक रही थीं, मानो कोई सख्त हाड़मारी की हो। उसकी साँस तेज़ी से चल रही थी। भाई को दोनों हाथों से पकड़, वह हिचक-हिचककर बोला—चन्दन, मैंने ऐसा भयंकर सपना जीवन-भर न देखा होगा....

माँ बीच में ही विस्मित-सी बोलीं—अरे, यह तो ऐसा चिल्लाया कि मेरे तो प्राण सूख गये !

—चन्दन, अनन्त सागर था। न ओर, न छोर। तीस-तीस फुट की मछलिय थीं, जब कि छोटी-छोटी मछलियाँ भी असंख्य थीं। मैंने देखा, मैं मँझोले कद की मछली बन गया था और पानी पीता जा रहा था। उसमें छोटी-छोटी मछलियाँ भी निगलता जा रहा था, जो मेरे पेट के अन्दर तड़प-तड़पकर शांत होती जा रही थीं। पर मेरी चाह थी कि मैं बड़ी-से-बड़ी मछली बन जाऊँ, इसलिए मुझे और कुछ सूझता ही नहीं था। अचानक एक बड़ी मछली मेरी ओर बढ़ी। मैं पीछा छुड़ाता रहा, वह मेरी ओर बढ़ती रही। फिर तो कई मछलियों की दृष्टि मुझपर पड़ गयी। प्राण-रक्षा के लिए मैंने सागर का कोना-कोना छान डाला। खूब गर्जना हुई। लहरें प्रचंड वेग से आकाश की ओर उठकर, फिर धड़ाम से पानी के धरातल में मिल जाती थीं। इतनी उथल-पुथल में भी वे मुझे घूरती रहीं और मैं इधर-उधर भागता रहा। मैं भागता रहा, पर वे एक ही छलांग में मेरे निकट पहुँच जाती थीं। काफ़ी समय तक यह संघर्ष चलता रहा। अत में एक बड़ी मछली मेरे आधे भाग को निगल गयी। मैं खूब चिल्लाया। छोटी मछलियों की खिलखिलाहट गूँजने लगी और मैं तपे लोहे के समान क्रोधित हो उठा। बड़ी मछली के दहकते पेट में जाने के सिवा और कोई चारा ही नहीं था। मेरा रोम-रोम काँप उठा। मृत्यु सम्मुख थी और मैं तड़प रहा था कि मेरी नींद खुल गयी। समझता हूँ कि मैंने प्राण-रक्षा के लिए बहुत ही कठिन परिश्रम किया।

रेखा तौलिया ले आयी। चन्दन ने भाई का पसीना पोंछ, उसे बिस्तर पर लिटा दिया। बोला—भैया, पूँजीवादी समाज के यही रंग-ढंग हैं। छोटे व्यापारी अपनी रक्षा के लिए कितना भी प्रयत्न करें, पर उन्हें कुछ लुटेरों के उदर में जाना ही पड़ता है। इसी लिए मैंने तुमसे कहा था कि छोटे व्यापारियों को भी इस समाज को बदलने के हेतु मज़दूरों, क्लर्कों और किसानों का साथा देना ही होगा।

गुलाब आज कैसे कह देता, मारो गोली अपने साम्यवाद को !....आज उसे चन्दन के शब्दों में आँखों-देखी वास्तविकता की झलक मिली थी। ठंडी साँस लेकर बोला—आग लगे ऐसी पूँजीशाही को ! सारा जीवन दाँव पर लगाकर जिस सीढ़ी पर चढ़ रहा था, वह ऐसी गिरी कि मेरे हाथ-पाँव ही तोड़ गयी !

गुलाब राय सर पर हाथ रखकर बैठ गया।

प्रभाती किरणों ने बत्ती के प्रकाश को श्रीहीन कर दिया।

चन्दन ने कहा—भैया, सुबह अवश्य आयगी। जैसे-जैसे यह धनवान् और निर्धन का अन्तर बढ़ता जायगा, अर्थात् धनवान थोड़े और निर्धन बहुत होते जायँगे, वैसे-वैसे इस व्यवस्था का अंत होता जायगा। अतः इसकी

खोखली भित्तियाँ अवश्य गिरेंगी। इसके स्थान पर एक ऐसा समाज स्थापित होगा, जिसमें प्रत्येक मनुष्य साधारण श्रम के फल-स्वरूप सुखी जीवन व्यतीत करेगा, उसका भविष्य पूर्णतः मंगलमय होगा !

गुलाब राय खिड़की से नारिकेल वृक्षों के पीछे उदीयमान सूर्य को देख रहा था। वह उधर ही देखता बोला—तुम्हारा ऐसा समाज शीघ्र हो स्थापित हो !

क्षण-भर के लिए शांति रही। गुलाब राय फिर बिस्तर पर लेट गया। चन्दन ने रज़ाई धीरे-धीरे गुलाब के कन्धे तक सरका दी।

एकाएक गुलाब ने पुकारा—देवी !

देवी ने पति के सर पर हाथ रखकर कहा—जी।

गुलाब ने उसे हाथ से खींच, बिस्तर पर बिठा, अपना सर उसकी गोद में रख दिया। रेखा और चन्दन अपने कमरे में चले आये। किवाड़ बन्द कर चन्दन चारपाई पर जा बैठा। रेखा बाहें बाँधे, पृथ्वी की ओर देखते हुए, किसी विचार में खड़ी थी। चन्दन ने कहा—इधर आकर बैठो।

रेखा मानो किसी जादू के बल पर खिचकर चन्दन के बिस्तर पर जा बैठी। पर अभी तक वह किसी गम्भीर विचार में मगन थी।

चन्दन ने पूछा—क्या सोच रही हो ?

रेखा ने सर उठाकर, लम्बी साँस लेते हुए कहा—समझ में नहीं आता कि आपमें और गुलाब दादा में इतना अन्तर क्यों है ?

—रेखा, यह हमारे परिवार की एक दुःख-भरी कहानी है। सुनोगी, तो तुम्हें भी दुःख होगा।

—मनुष्य केवल सुखमय कहानियाँ सुनने के लिए उत्पन्न नहीं हुआ !

चन्दन उदास हो गया। ज़मीन की ओर एकटक देखते हुए बोला—वर्षों पूर्व की कहानी है। उस समय हम बहुत निर्धन थे। माँ बेचारी प्रति दो-दो वर्ष के बाद परिवार की संख्या में वृद्धि करती जाती थी और पिताजी लकवे के रोग के कारण कमा सकने में असमर्थ थे। जब मैं और गुलाब संसार को समझने-योग्य हुए, तो हमने देखा कि हमारी छोटी-से-छोटी अभिलाषा को ठुकरा देने में भी वह नहीं हिचकती थी। जब हमारे छोटे-छोटे हाथ खिलौनों के लिए ऊपर उठते थे, तो माँ बेचारी अपने आँचल में बँधे हुए पैसों को देखकर रो पड़ती थी। हम पास-पड़ोस के बालकों से खिलौने छीनते थे, तो खूब लड़ाई होती थी। अपूर्ण भोजन मिलने पर हम एक-दूसरे के कौर छीनते थे, तब भी खूब लड़ाई होती थी। गोलियों, पतंगों, कपड़ों से लेकर स्कूली किताबों तक के लिए हमें लड़ना पड़ता था, और यह संघर्ष हमारे अंग-अंग में समा गया। स्कूली जीवन में इस संघर्ष ने बौद्धिक रूप धारण किया। मैं सदैव सर्व प्रथम आने के लिए प्रयत्न करता था और गुलाब, जो

शरीर में मुझसे ज़्यादा बलवान था, लड़ाकू लड़कों का सरदार बन गया। तत्पश्चात् एक ऐसी घटना घटी, जिससे हमारा रहा-सहा बचपन भी जाता रहा।

चन्दन मौन हो गया।

पुरानी बातों को याद कर उसका मन दुःख से आक्रान्त हो उठा। क्षण-भर के बाद उसने फिर कहना आरम्भ किया—एक दिन हमारे घर में अन्न का एक दाना भी न था। माँ ने चावल उधार लाकर भात पकाया। गुलाब दूसरे दिन लौटकर जब चौके में गया, भोजन के लिए, तो उसके हाथ कुछ न लगा। वह मुझसे झगड़ने लगा, तुमने रात का बचा हुआ भात क्यों खा लिया ? हम कुत्तों की तरह लड़े। गुलाब की कमीज़ फट गयी। एक कमीज़ थी, जिसे पहनकर वह स्कूल जाता था। वह इतना क्रोधित हुआ कि अपनी नाखूनोंवाली अंगुलियों को गोल-गोल कर मुझपर झपटा, पर वार पलट गया। आँख के नीचे का यह चिह्न स्मृति के रूप में रह गया है।

रेखा ने झुककर देखा, चन्दन की आँख के नीचे खरोंच का चिह्न अब तक विद्यमान था।

चन्दन बोला—हम दोनों एक-दूसरे को अन्धा बनाने का प्रयत्न कर रहे थे, पर भूख हमें पहले ही अन्धा बना चुकी थी। चारपाई के पास माँ का शरीर थोड़ा हिला और मैं अपना घाव भूल गया। मैंने आँखें फाड़कर देखा कि माँ के सर से रक्त का फव्वारा निकल रहा था। हमें मालूम ही न पड़ा कि कब माँ हमें छुड़ाते-छुड़ाते हमारी चोट का शिकार बन गिर पड़ी थी। उस रात माँ काफ़ी समय तक बेहोश रही। हम दोनों बहुत रोये। अलग रोये, माँ से चिपककर रोये और अंत मे दोनों गले मिल-कर रोने लगे। गुलाब ने कहा, माँ अच्छी हो गयी, तो मैं तुम से कभी नहीं लड़ूँगा।

—मैंने उसके कन्धे पर हाथ रखकर कहा, हम गरीब हैं, इसी लिए तो इतना लड़ते हैं।

—गुलाब बोला, इसके बाद मैं चोरी करूँगा, डाका डालूगा, पर ग़रीब न रहूँगा ! उसने पड़ोस के एक साहूकार के नौकरी के लिए हाथ-पाँव जोड़े, जिसने उसे अपनी दुकान पर विदेश भेज दिया। वहाँ उसके संघर्ष का क्षेत्र और भी विस्तृत हो गया ! वह केवल प्राणवान मनुष्यों से ही नहीं, बल्कि रुपये और चाँदी-सोना-जैसे जड़ पदार्थों से भी टक्कर लेने लगा।

—माँ के स्वस्थ हो जाने के बाद, जब कभी मैं अपना घाव देखता था, तो मुझे उस पाशविक घटना की याद हो आती थी। मैं अपने अंतर से पूछता था, जो भूख मनुष्य को पशु बना देती है, उसका इस संसार से अस्तित्व क्यों नहीं मिट जाता ? मेरी मित्रता उन लड़कों से होने लगी, जिनके घर में भूख थी, जो पुराने कपड़े पहनकर स्कूल आते थे, पर बौद्धिक दृष्टि से प्रतिभाशाली थे। उनके हृदय

में भी शायद मेरा ही प्रश्न गूँजता था। जब कालिज में प्रविष्ट हुए, तो खूब पुस्तकें पढ़ने और वाद-विवाद करने लगे। हमने फ़ीस कम कराने के लिए हड़तालें कीं। उस समय कांग्रेस ब्रिटिश शक्ति से टक्कर ले रही थी, इसलिए उसका जन साधारण पर काफ़ी प्रभाव था। हमने गाँधीवाद का अध्ययन और अभ्यास करना शुरू किया। हम भी अंग्रेजों के विरुद्ध आन्दोलन कर जेल हो आये। रेखा, हमने सोचा था, कि स्वतंत्रता के बाद हमारी ज़िन्दगी सुधर जायगी। हमने अपने सुनहले स्वप्नों को धूल में मिलते देखा। हम लोगों का जीवन कुचल दिया गया। प्रकाशमान घरों की जगह काल कोठरी-जैसी बैरकों में रहना पड़ा, बच्चे शिक्षा पाने की उम्र में अपनी उदर-पूर्त्ति के लिए खट्टी-मीठी गोलियाँ बेचने को मजबूर हुए। हजारों लोगों के सुखी जीवन की महत्वाकांक्षाएँ बेकारी, बेरोजगारी की चक्की में पिसने लगीं। हज़ारों नारियाँ मातृत्व की ममता को दबाकर आकाश की ओर देखती रहीं कि वह स्वर्णिम प्रभात कब आयगा, जब कोई मीठी, तुतलाती भाषा उनको नींद से जगायगी और दो छोटे, कोमल हाथ उनकी पयस्विनी छाती को ढूँढ़ेंगे। बूढ़ी माताओं के लाल निर्बल होते गये। उनकी युवती पुत्रियाँ हाथों पर मेंहदी लगाने से वंचित हो, माथे पर गगरियाँ उठाकर कुँवों के नलों पर पंक्तियाँ बाँधने लगीं। प्रतिष्ठित घरों के वयोवृद्ध पुरुष रेलवे प्लेटफार्म पर बिस्तर उठाने लगे, खोमचे लेकर गलियों में फिरने लगे। इस तरह ज़िन्दगानियाँ घुटती-पिसती रहीं। इसी समय चीन की जन-क्रांति ने हमारी आँखें खोल दीं। हमारे दल के प्रत्येक नवयुवक ने शपथ ली, कि अपने जीवन का प्रत्येक पल का उपयोग मानव-जीवन की सेवा के लिए करेंगे। जब तक भूख-बेकारी से मुक्ति नहीं मिली, जब तक अशिक्षा और रोगों से छुटकारा नहीं मिला, तब तक स्वतंत्रता का अर्थ क्या ? उन दिनों गुलाब का एक पत्र आया था। पढ़ोगी ?

चन्दन पेटी में एक पुरानी फाइल ढूँढ़ने लगा। रेखा ने सोचा, मैं भी कैसी मूर्ख थी ! जिसका जीवन विश्राम से पूर्णतः वंचित रहा, उससे विलास पाने की कामना कर रही थी !

चन्दन ने पत्र लाकर रेखा के हाथ में दिया। पत्र के अंतिम भाग में लिखा था :

चन्दन, तुम्हें समझाने के लिए एक बार फिर लिखना पड़ता है कि तुम जिस राह चल रहे हो, उससे घर का विनाश होने की सम्भावना ही अधिक है। तुम्हें हज़ार बार लिखा है कि तुम मेरे पथ पर आ जाओ, तो दोनों मिलकर घर को सोने से भर दें। इस संसार में निर्धन का कोई नहीं, धनवान के सभी मित्र हैं। तुम यहाँ अफ्रीका आ जाओ, तो दोनों कमाकर घर का नाम उज्ज्वल कर देंगे। मैं यहाँ अफ्रीका में खरा कंचन कमा रहा हूँ। बेचारे ग्रामीण माँगते पाँच गज हैं, तो देता चार गज हूँ, क्योंकि वे निरे भोदू हैं। अफ्रीका तो मूर्खों का ही देश है। हाँ, रोग कुछ अधिक

हैं, पर प्रति दिन दो-ती न रुपये औषधियों पर खर्च करके, चैन से रहा जा सकता है। केवल बड़े व्यापारी हौए हैं। दूसरों को हड़पने की सोचते रहते हैं। लाखों कमाते हैं, सो तृप्त बैल की तरह लातें मारते रहते हैं। परन्तु मेरा नाम भी गुलाब है। देखना, पाँच-छः साल के अन्दर कितना कमाता हूँ! अगर अब भी तुम पत्रों, पुस्तकों, सभाओं और वाद-विवादों में समय नष्ट करते रहोगे, तो एक समय ऐसा आयगा कि मैं शिखर पर खड़ा रहूँगा, और तुम भिखारी के-से मैले-कुचैले कपड़ों में, निर्बल शरीर और करुण दृष्टि लिये, दूसरों की ओर तकते रह जाओगे!

पत्र पढ़कर रेखा के नेत्र अश्रु-प्लावित हो गये। गहरी साँस के साथ उसके मुँह से निकला—भूला हुआ पथिक!

चन्दन ने पूछा—तुम्हें गुलाब पर दया आती है?

—नहीं! मुझे इस समाज पर दया आती है, जिसने उन्नति के मार्ग इतने सँकरे कर दिये हैं। लोगों का भविष्य इतना अरक्षित कर दिया है कि कोई भी सुख चैन से जीवन व्यतीत नहीं कर सकता।

—जो समाज दया के योग्य है....

—उसे बदलना ही पड़ेगा!—रेखा ने चन्दन का वाक्य पूरा करते हुए कहा। चन्दन ने रेखा का गुलाबी हाथ उठाकर अपने मुख पर रखा। रेखा सोचती रह गयी, जो प्रश्न वर्षों तक मेरे हृदय में काँटे की तरह चुभता रहा, उसका उत्तर तो भूत के पृष्ठों में छुपा हुआ था!

चन्दन ने उसे खींचकर हृदय से लगा लिया। रेखा उसकी गोद मे मुँह छुपाती हुई बोली—मैंने तो समझा था, आपके पास हृदय ही नहीं है....

चन्दन रेखा का मुख अपनी हथेलियों पर टिकाये मुस्कुराता रहा। रेखा शरमाती हुई बोली—परन्तु अब....

चन्दन ने कहा—परन्तु अब....

—परन्तु अब समझती हूँ कि आपके पास भी हृदय है, एक भावुक और सजीव हृदय!

—:०:—

श्रीपतराय ने भार्गव प्रेस, बाई का बाग में मुद्रित कर
५, सरदार पटेल मार्ग, इलाहाबाद से प्रकाशित किया।

क्या आप जानते हैं

कि हाल में उत्पादन करों में हुई वृद्धि का आप पर क्या प्रभाव पड़ता है

जब आप चीनी खरीदें तो ध्यान रखें कि केवल ५ नये पैसे प्रति पौंड या १० नये पैसे प्रति सेर कर वृद्धि हुई है।

वनस्पति तेलों में घानियों अथवा छोटे उत्पादकों द्वारा उत्पादित तेल पर कोई शुल्क नहीं बढ़ा है। अतएव कीमतें भी नहीं बढ़नी चाहिए। बड़ी मिलों द्वारा तैयार होने वाले तेलों पर भी केवल २ नये पैसे प्रति पौंड शुल्क बढ़ेगा। गत वर्ष इस तेल में १० से २० नये पैसे प्रति पौंड वृद्धि हो चुकी है। अतएव यह तुच्छ वृद्धि व्यापार क्षेत्र द्वारा ही सहन की जा सकती है।

अगर आप धूम्रपान करते हैं तो कृपया ध्यान रखें कि केवल विशुद्ध भारतीय तम्बाकू से बनने वाली सिगरेटों जैसे कि 'चार मीनार' 'शाह दक्खन' को छोड़ कर आप किसी भी छाप सिगरेटों का मूल्य अधिक नहीं देंगे। इन स्वदेशी सिगरेटों के एक पैकिट पर ½ से लेकर १ नया पैसा कर बढ़ेगा। १०० बीड़ियों की कीमत केवल १ नया पैसा अधिक होगी। तम्बाकू का मूल्य किसी भी दशा में १३ नये पैसे प्रति पौंड से अधिक नहीं बढ़ना चाहिए।

माचिसों में ४० तीलियों वाली माचिस का ४ नये पैसे और ६० तीलियों वाली माचिस का मूल्य ६ नये पैसे से अधिक नहीं होना चाहिए। इसमें व्यापार का उचित लाभ और बढ़ा हुआ कर दोनों सम्मिलित हैं।

लिखने का साधारण कागज [८ पौंड] एक दस्ते का मूल्य किसी भी प्रकार १½ नये पैसे से अधिक नहीं बढ़ना चाहिए।

उचित मूल्य ही दीजिए
इससे आपका और देश का लाभ है।

DA 57/50

UPANYAS Regd. No. A-766
57 Price 75 nP.

केवल १५) रुपये

कहानी, उपन्यास और

साहित्य परिचय

तीनों मासिकों का

सम्मिलित चन्दा अब भी

केवल १५)

और

सम्मिलित ग्राहकों को

सरस्वती प्रेस के सभी प्रकाशन

पौने मूल्य में

डाक-रेल-खर्च की सुविधा भी

★

आज और अभी १५) रुपये

मनीआर्डर से भेज दें

★

सरस्वती प्रेस

५, सरदार पटेल मार्ग, इलाहाबाद-१

केवल कवर देश सेवा प्रेस, इलाहाबाद--३